CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant 2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

3.2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

श्रद्धेय
दण्डी स्वामी श्री विमलानन्द जी सरस्वती
को सादर भेंट —

[illegible]

११.८.२५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मनबोध मास्टर की डायरी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

जगतराम एण्ड सन्ज़

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मनबोध मास्टर की डायरी

विवेकी राय

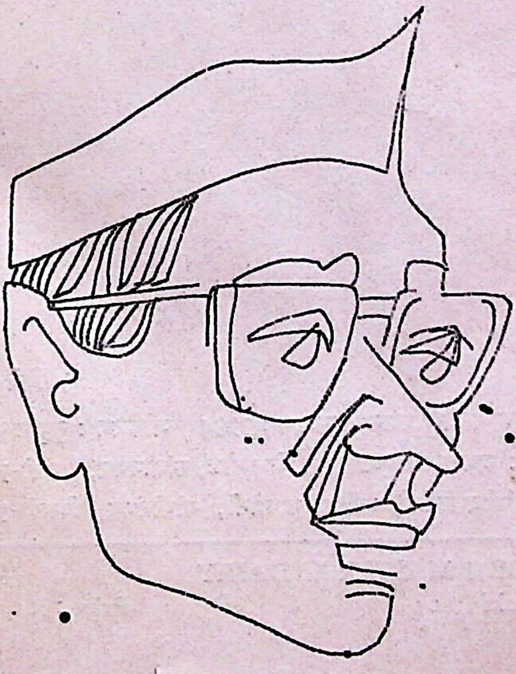

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

© विवेकी राय

मूल्य : तीस रुपये / प्रथम संस्करण : 1984 / आवरण : सुकुमार चटर्जी
प्रकाशक : जगतराम एण्ड सन्ज़, मेन रोड, गांधीनगर, दिल्ली-110031
मुद्रक : संजीव प्रिंटर्स, महिला कालोनी, गांधीनगर, दिल्ली-110031

MANBODH MASTER KI DAIRY (Hindi)
by : Viveki Rao
Price : Rs. 30.00

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रम

आज कमरा गाता है	9
चोर	16
मेरा प्रोग्राम	21
मार्ग मनोविज्ञान	28
भाड़	34
प्रयोगवादी शिक्षा	48
गुदड़ी में	53
मास्टरों की मौज !	58
अवकाश के दिन	64
अखबार और अध्यापक	72
अनाचार की आंच	77
एक ग्रेजुएट प्राईमरी टीचर का पत्र	85
अथक अकथ कथ	91
कोई एक आहट	95
तिरपन घंटे बाद	100
मंहगाई भत्ते की ढोल	105
नरेन्द्र क्या करे ?	111
मास्टर कमल	117
स्वप्न मुक्ति	122
सत्यनारायण की कथा	129
कविता का विकल्प	134
उड़ता पंछी	139
आठ जुलाई	144

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आज कमरा गाता है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

आज कमरा गाता है

डायरी लिखने वैठा हूं तो हरिकीर्तन कानों में गूंजने लगा है। इसी गूंज में उस कमरे का जिसमें कीर्तन का आयोजन था, अतीत भी गूंज रहा है। कह नहीं सकता कि कौन-सी गूंज प्रबल है। उस कमरे से मेरा सम्बन्ध तेरह-चौदह वर्षों का है। रात उसका नया रूप देखकर लगा कि वास्तव में वारह वर्षों में घूरे के दिन लौटते हैं। जिस समय मैं पहुंचा छात्रवास का एक छात्र गणेश राय ध्यानस्थ होकर बड़ी तन्मयता और मस्ती में गा रहा था—

'मैंने जीवन का सौंप दिया,
अधिकार तुम्हारे हाथों में।
उत्थान-पतन अव मेरा है,
सरकार तुम्हारे हाथों में।'

पीछे से समवेत स्वर में अनेक छात्रों ने दुहराया। झांझ की झनकार ढोल की गमक और तरुण कण्ठों की नवोल्लसित स्वरभंगिमा, सबने मिल-कर एक जादू-सा डाल दिया। कलेजा उछलने लगा। मन भरने लगा। लगा कि इस संसार की सरकार के ऊपर अवश्य ही एक और सरकार है। जिसके हाथों में हम सबका उत्थान-पतन निहित है। आज से दस-पन्द्रह वर्ष पूर्व क्या कोई कल्पना कर सकता था कि इस कमरे में यह स्थायी रौनक आयेगी या इसमें युवक छात्राध्यापकों का आवास बनेगा? आज चमचमाती हुई लैंप जल रही है। चौकियां लगी हैं। टेवुल पठन-पाठन की सामग्री से भरे हैं। बिस्तरे, वक्स, साफ-सुथरे कपड़े, दक्षिण-पश्चिम ओर अरगनी, सूखने के लिए फैलाये गये कपड़े, एक लाल लंगोट सूख रहा है, पूरी विद्यार्थियों की गृहस्थी। जिन पत्थर की आलमारियों पर प्राइमरी स्कूल के बच्चों की पटरियां, हंडियां, टीन, दुधिया की दावातें,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

फटे-पुराने कागज, कूड़ा-करकट, बोरे के टुकड़े और चूहों के बीट पड़े रहते थे उन्हीं पर आयरन किये चमचमाते सूट, जिल्ददार कापियां, सुगन्धित तेल की शीशियां, फाउण्टेनपेन इंक की दावात, मोटी-मोटी पुस्तकें और सुरुचि पूर्ण सामग्री-सजावट दिखायी पड़ रही हैं। बेशक, यह कमरा पहली बार बहुत पहले हमारी आंखों के सामने प्राइमरी स्कूल के रूप में ही आया। लगभग दो बजे मैं आया था। खादी के कुर्ता और धोती में लिपटे भरे शरीर वाले एक अध्यापक महाशय थे जो बीच के कमरे में पुराने टेबुल पर पैरों को नीचे किए हुए बैठे थे। अर्थात् कुर्सी नहीं थी। लगभग पन्द्रह-सोलह लड़के थे जो नीचे जमीन पर टेबुल के इर्द-गिर्द बैठे थे। अर्थात् टाट नहीं था। याद नहीं क्या पढ़ाई हो रही थी। शायद कुछ नहीं।

भजन का ताल टूटा तो एक दूसरे छात्राध्यापक रामऔतार चौबे ने एक नये कीर्तन गीत का आरम्भ किया—

'हरी भजन है सार जगत में
हरी भजन है सार।
माया का बाजार लगा है
माया का परिवार॥'

चौबे जी कुछ पहलवान किस्म के हैं और गला बहुत ऊंचा है। उन्होंने खूब आकर्षित किया और एक मिनट तक कीर्तन की ध्वनि में उलझे रहने के बाद मन माया के वास्तविक बाजार में घूमने लगा। मेरे सामने फिर उस कमरे का इतिहास नाचने लगा। इस बिल्डिंग ने भी खूब दिन देखे! प्राइमरी स्कूल से मिडिल स्कूल, हाई स्कूल, कालेज और अब ट्रेनिंग कालेज तक इसकी तरक्की हुई। अभी न जाने इसके भाग्य-भविष्य में क्या लिखा है? खूबी यह कि तीन कमरे, दो कोठरी और एक बरामदे वाली यह इमारत पुकारने के नाम से सदा प्राइमरी स्कूल ही कही जाती रही।

जिस कमरे में हरिकीर्तन होता था उसमें कभी मिडिल-स्कूल के अध्यापक और छात्र रात में रहते थे। उस समय एक मशहूर बात यह थी कि सबसे पश्चिम वाले कमरे में 'तेलिया बाबा' तबला बजाते हैं। लड़कों का कथन था कि तबले की आवाज कानों से सुनी गयी है। किसने कानों से सुनी, यह पता नहीं चलता था, तो भी यह भूतभावना खूब प्रबल थी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रात को उस कमरे में कोई नहीं जाता था। अक्सर पूरब और बीच वाले कमरे में लोग सोते थे। इस बीच वाले कमरे में एक जगह ऐसी बतायी जाती थी जहां सोने पर आदमी रात-भर चौंकता रहता है। तब रात में जमीन पर टाट बिछाकर फाइनल परीक्षा देने वाले छात्र हिसाब, ज्यामेट्री और इतिहास-भूगोल रटा करते थे। एक मास्टर चारपाई पर बैठ जाते और चारों ओर से लड़के घेर कर पढ़ते रहते। कुछ हाई-स्कूल और इण्टर के प्राइवेट परीक्षार्थी भी हैं। बड़ी रात तक रसोई होती है। लड़कों के चौके अलग-अलग हैं। उछल-कूद, गुल-गपाड़े के बीच भी कड़ा अनुशासन है। तब अध्यापकों को कोई छात्र 'मास्टर-साहब' नहीं कहता था। मुंशीजी, पंडितजी और बाबू साहब जैसे नाम सुनने में आते। 'मुंशीजी' नाम सबसे ऊपर था। जैसे यहां की शिक्षा-दीक्षा का डीह यह इमारत है उसी प्रकार एक मुंशीजी भी है और तब सबके केन्द्र में एक और शकल थी जो समय-समय पर इस कमरे में दिखाई पड़ती थी और एक सुन्दर-सा नाम होने पर भी लोग उन्हें 'मंत्री जी' कहा करते थे। अब सब बिखर गया। मुंशीजी कॉलेज में चले गए। मंत्री जी शहर में चले गए और प्राइमरी स्कूल हट गया। तब भी यह बिल्डिंग है और सारी यादें लिए ये कमरे हैं, जिनमें से ध्वनि निकल रही है कि भजन छोड़ कर इस माया के बाजार रूपी संसार में कोई वस्तु सार-तत्व-स्वरूप नहीं है हर चीज का रंग एक-एक क्षण में बदल रहा है। किसी में उपयोगी परिवर्तन होता है और कोई वस्तु भद्दा रूप ग्रहण कर लेती है। मेरे देखते-देखते यहां कितना परिवर्तन हुआ ? जहां पर एक टेबुल को चारों ओर से घेर कर कुल पन्द्रह-सोलह लड़के बैठे थे, वहां, ठीक उसी कमरे में इस समय सैकड़ों की भीड़ ठसाठस भरी हुई। और यह रहा उसका हाल का प्राइमरी स्कूल वाला रूप।

सुनकर आश्चर्य होगा कि एक साधारण कमरे में सैकड़ों छात्र कैसे पढ़ते रहे ? वास्तव में यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि वे 'पढ़ते थे'। हां, स्कूल आते थे। कमरे में बैठते थे और उन्हें घेरकर एक अध्यापक बैठे रहते थे। यह दशा अभी एक साल पहले तक इस कमरे की थी। वह अपूर्व दृश्य था। जब छुट्टी होती थी और भीतर से नर-बानर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

का झुण्ड निकलने लगता था तो लगता था कि सचमुच हिन्दुस्तान तरक्की कर रहा है। वे दर्जा एक और दो के नंगे, अधनंगे, दुधिया-कजरी हाथ-मुंह पर लपेटे, रंग-विरंगे कार्टून की तरह लड़के, शोरगुल और चीख-चहक की अपनी मस्ती में मशगूल लड़के और एक कमरे से निकल कर पूरे मैदान, रास्ते और गली में फ़ैल जाने वाले गांव के लड़के। आश्चर्य होता कि कैसे एक कमरे में वन्द रहते थे ? जव छुट्टी होने को होती तो अध्यापक कहते कि 'अव वुकिंग खुलने जा रही है।' सबसे पहले इस वीच वाले कमरे की वुकिंग खुलती और तव वाद में क्रम से पूरव और पश्चिम वाले की। रोज एक वार चर्चा होती कि धन्य है लड़कों की शक्ति जो कई-कई घंटे इस प्रकार भीतर रह जाते हैं। कोई अन्य आदमी कमरे में प्रवेश करना चाहे तो भीतर से जलती वदवू मानो उसे धक्का देकर वाहर कर देती। हिम्मत कर यदि कोई गया भी तो कुछ ही मिनटों में फिर भाग खड़ा होता। लड़के मजे में पढ़ रहे हैं। लिख रहे हैं, पटरी पर कजरी पोत रहे हैं, हल्ला कर रहे हैं और भीतर उस सजीव-पुतलों के गोदाम में न जाने क्या-क्या कर रहे हैं। छुट्टी होने के वाद सभी फाटक और खिड़की खोल देने पर भी वह वदवू रात भर में नहीं मिटती। प्रायः छुट्टी के वाद लड़के कमरे को वन्द करके ही सो जाते और इस प्रकार वह वदवू भी वन्द हो जाती और सुबह आकर फिर गांव के फूल उसमें वस जाते। पढ़ाई, शोर-गुल, वदवू, भीड़, भद्दा रूप और ऊवऊवकाई भरा वह सरस्वती-मंदिर इस प्रकार वर्षों सड़ता रहा। जैसा कि कहा गया है, घूरे के दिन भी लौटते हैं। और आज क्या देखता हूं ? चौवे जी के वाद गणेश राय ने फिर आंख वन्द कर बड़ी तन्मयता के साथ एक भजन उठाया—

'जो करुणाकर तुम्हारा व्रज में
फिर औतार हो जाये।
तो भक्तों का चमन उजड़ा हुआ
गुलजार हो जाये॥'

तो, सचमुच करुणाकर की कृपा से यह उजड़ा चमन गुलजार हो गया। प्राइमरी स्कूल हट कर दूसरी जगह चला गया और जनम-जनम का स्कूलिया कमरा ट्रेनिंग कॉलेज का हो गया। रात में यहां छात्राध्यापक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहने लगे। दिन में प्राइमरी स्कूल, रात में हाई स्कूल के अध्यापकों का क्वार्टर-जैसा, इस कमरे का रूप भी काफी दिलचस्प है। लेकिन वह रूप मनोरंजक भर है। सुखकर नहीं है। जुलाई से लेकर अक्तूवर तक जब कि सभी रास्ते बरसात के कारण खराव हो जाते, कुछ अध्यापक इसी प्राइमरी स्कूल की 'शरण' में रहते। शरण देने के लिए यह इमारत बहुत मशहूर है। उन शरणार्थी अध्यापकों की संख्या तीन से लेकर कभी-कभी सात तक पहुंच जाती। मैं भी उन्हीं में से एक। हम लोगों की हालत ऐसी होती कि रहकर भी मानो यहां रहते नहीं थे। उदाहरण के लिए जिस दिन जोर से पानी बरसने लगता उस दिन कई लोग रुक जाते और कहां सोया जाय, यह प्रबन्ध भोजनोपरान्त रात में ग्यारह बजे सोचा जाता। धुक-धुक जलती मुंशीजी की लालटेन लेकर इस बीच वाले—हरिकीर्तन वाले—कमरे में इधर-उधर टटोला जाता। किसी को दो वेंच मिल गयीं। वस सटाकर काम चलता बना। किसी ने टेबुल पर आसन बनाया। किसी ने तीन कुर्सियां जोड़कर सोने भर की जगह निकाल ली। एक बार खूब मजा आया। एक सज्जन के सोने की कोई व्यवस्था नहीं हो पा रही थी। मूसलाधार पानी बरस रहा था। गांव में जाना कठिन था। मुंशीजी ने कहा कि यह हम लोगों की बुद्धि परीक्षा का समय है। अन्त में प्रमोदकुमार की एक सूझ ने काम किया। एक बड़ा सा श्यामपट्ट लेकर दूर-दूर रखे दो स्टूलों पर लगा दिया गया और एक आसन बन गया। बिस्तर की समस्या का हल बालकों के टाट से कर लिया गया। कठिन समस्या होती उन्हें झाड़ने की क्योंकि इतनी गन्दी धूल उड़ती कि घण्टों दम घुमता रहता। कहां से इतनी धूल रोज आ जाती है। वास्तव में यह नाम मात्र की पक्की इमारत है। नीचे फर्श पर कच्चे से भी अधिक कच्चा था। खैर, किसी प्रकार बरामदे में या बाहर ले जाकर टाट साफ किये जाते। वे मजबूरियां और आज की यह मस्ती ! कोई तुलना ही नहीं कर पाता हूं। यह रोशनी, यह सुगन्ध, ये सुविधाएं और ऐसी प्रसन्न टोलियां तब कभी इस कमरे में कहां ? गणेश राय के बाद फिर चौबे जी ने शुरू किया—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

'घर-घर में सीताराम की
ध्वनि होनी चाहिए।
सब प्रेमियों को राधेश्याम
कहना चाहिए ॥'

बाद में ज्ञात हुआ कि चौबे जी और गणेश राय में होड़ लगी है कि कौन अधिक कीर्तन के पद को गाता है ? किसके गीत समाप्त हो जाते हैं। यह होड़ कितनी पवित्र है। कैसा पवित्र वातावरण बन रहा है। दुनिया के पाप-ताप और चिन्ता-क्लेश, ढोल-झाल के साथ नवल-कंठों की झंकृत ताल-ध्वनि की स्निग्ध आंधी में उड़ जाते हैं। समवेत गायन गूंज में वर्तमान एक आह्लादक क्षण बनकर शेष रह जाता है। अतीत की दुखद याद भी सुखद हो जाती है। कोई और ठोस चिह्न तबका न रहने पर भी दीवारों पर बने वर्णमाला के चार्ट तबकी याद दिला देते हैं। ऊपर 'सदा सत्य बोलो' या 'बड़ों का कहना मानो' जैसे आदर्श वाक्य अंकित हैं। छत पर चूना लगाया गया जरूर है, परन्तु जनम-जनम की कालिख जल्द थोड़े ही मिटती है। अभी भी वह मटमैला है। खूब धूआं खाया है इस छत ने भी। वह मुंशीजी का 'चलता-फिरता किचन' मुझे याद आया। एक फूटी हुई बड़ी-सी कड़ाही में वह 'चलता फिरता किचन' बन गया था। इसमें उपले सुलग कर भोजन बनता। कड़ाही सुविधानुसार बरामदे में या कमरे में रखी जाती। जब पानी बरसने लगता तो प्रायः इसी कमरे में वह आग भरी कड़ाही उठाकर चली आती। धूएं से पूरा कमरा इस प्रकार भर जाता कि एक मिनट भी उसमें रुकना कठिन होता। आंखों से पानी गिरने लगता। दम घुटने लगता। पर ऐसे में ही सब काम होता। आटा गूंथ कर बाटी बनायी जाती। आग पर दाल की बटली पहले से चढ़ी होती। उसके अगल-बगल जगह बनाकर बाटी सेंक ली जाती। फिर चोखा बनता। सारी रसोई उसी कड़ाही की आग पर सम्पन्न हो जाती। हां, एक बात का उल्लेख छूट न जाए। उन दिनों इस कीर्तनवाले कमरे में हाथ-हाथ भर तक गहरे-गहरे गढ़े थे, जिनमें धूल-माटी और कंकड़-पत्थर जमा रहते। कमरा शायद कभी-कभी ही झाड़ा जाता रहा हो। फर्श के इस ऊबड़-खाबड़पन से हम लोगों को लाभ यह था कि पानी आदि फेंकने कहीं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाहर नहीं जाना पड़ता। उन गड्ढों में पानी फेंकना उनकी सफाई करना ही था। आज न वह धूल है और न वह धुंआ। फर्श पक्का हो गया है। न वह मनहूसी है और न मजबूरी। तब कमरा रोता रहता था और आज यह कमरा गा रहा है। तब इसका कुरूप दुख:दायी था और आज इसमें से रंग झड़ रहा है। सच है, जो वहुत दु:ख झेलता है उसे सुख के दर्शन होते हैं। भगवान् सबकी खवर लेते हैं। इंसान की तरह इस कमरे के भाग्य को भी मैं समझ रहा हूं। इसी समय फिर जो गणेश राय की वारी आ गयी और उन्होंने जो नीचे का गीत उठाया उसे मैं इस गत-अभागे कमरे की ओर से गाया जाना समझ रहा हूं—

'मैं दुखिया शरण तुम्हारी,
मेरी पत राखो गिरधारी।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

चोर !

आज जब मालूम हुआ कि विमल बाबू का मकान रास्ते में ही पड़ेगा तो ऐसा लगा मानो यात्रा सफल हो गयी। आशंका यह थी कि वे घरपर मिलेंगे नहीं। आज का युग दौड़धूप का है। फिर, इतने बड़े आदमी! प्रभावशाली वक्ता, नामी नेता, भाग्य से ही भेंट सम्भव थी। सैकड़ों समस्याएं हैं, हजारों काम हैं, कभी पटना, कभी लखनऊ, कभी दिल्ली, एक क्षण भी विश्राम नहीं, धन्य हैं ये लोग भी।

उस दिन की अनेक बातें याद आयीं। जब 'शिक्षा सुधार सभा' के अधिवेशन के अवसर पर विमल बाबू का पदार्पण हुआ था। देखनेवालों ने बताया कि पहले से अब बहुत मोटे हो गए हैं। शरीर में चमक आ गयी है। पहले मोटा खद्दर पहनते थे और अब उनके वस्त्र संस्कार-वश ही खद्दर समझे गए। मुख्य आकर्षण का केन्द्र था उनका भाषण। लोगों ने तालियां बजायीं, मुंह से वाहवाही की और कहा कि विचारों को मथकर रख दिया। कुछ लोगों ने कहा कि आंखें खोल देने वाला भाषण रहा।

जिस समय मंच पर पैर पटककर पूरे जोश में विमल बाबू ने कहा कि 'इन शिक्षा की दूकानों में आग लगा दो' उस समय श्रोता उछल पड़े। तुमुल करतल ध्वनि गूंजी तो कई मिनट तक अगले शब्दों को व्यक्त करने के लिए उन्हें मंच पर चुपचाप खड़ा रहना पड़ा। अन्त में उन्होंने हाथ उठाया। लोग शांत हो गए। आगे भाषण चला—

'आज शिक्षा की मूल समस्या तो यह है कि स्कूल दूकान हो गए हैं। कॉलिज और यूनिवर्सिटियां मिल या फैक्टरी हो गयी हैं। उनके संचालक निजी स्वार्थ में पवित्र उत्तरदायित्व को भूल गए हैं। सबसे शैक्षिक गन्दगी माध्यमिक स्कूलों में है। थोड़े से स्कूल सरकारी है, शेष सभी जनता द्वारा चलाए जाने की आड़ में व्यावसायिक केन्द्र, शोषण केन्द्र, पार्टी केन्द्र और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अधोगति केन्द्र बने हैं। वही अंग्रेजी राज का एजुकेशन कोडका मुजाक, वही अध्यापक की शारीरिक और मानसिक दासता वहां मौजूद है। स्व-राज्य के बाद जनसेवा के नाम पर प्रशासक जिस प्रकार सत्ताधारी होकर एकदम अंग्रेजी 'साहब' हो गए, उसी प्रकार शिक्षा-संस्थाओं के छोटे से लेकर बड़े सभी अधिकारी 'साहब' हो गए। वे रोब के पुतले हैं या अधिकारी के पुतले हैं। सत्ताधारी हैं। वे शिक्षा-जगत के सामन्त हैं। छात्र और अभिभावक उनकी प्रजा है। अध्यापक उनके नौकर हैं। स्कूल उस ढंग से नहीं चलते जिस ढंग से शिक्षा शास्त्र के पंडित, विद्वान् अध्यापक चाहते हैं। वे उस ढंग से चलते हैं जिस ढंग से निरक्षर या अर्द्ध साक्षर उनके मैनेजर चाहते हैं। यानी स्कूल व्यक्ति विशेष की निजी इच्छाओं के क्रीड़ागार है। इन प्राइवेट स्कूलों पर सरकारी नियन्त्रण सिर्फ कागजी है ! वह अध्यापकों को पूरा वेतन नहीं दिला सकता। वह स्कूल में स्वतन्त्र और खुले शैक्षिक वातावरण का निर्माण नहीं करा सकता। फिर, इतनी जहां गन्दगी है, वहां अध्यापकगण दूध के धोये एवं कर्त्तव्यनिष्ठ रह सकें, यह असम्भव ही है...!'

इस प्रकार भाषण लगभग दो घंटे तक चलता रहा। शिक्षा का कोना-कोना विचारों के प्रकाश से जगमगा उठा। समाचारपत्रों का कालम दूसरे दिन विमल बाबू के भाषण से रंग गया। शिक्षा-जगत में तहलका मच गया। जिसने जहां पढ़ा वहीं तारीफ की। मैंने समाचार पत्र में प्रकाशित भाषण के अंश को काटकर सुरक्षित रख दिया। बाद में ज्ञात हुआ कि शिक्षामंत्री ने उस भाषण को पढ़कर कहा है कि यह पढ़कर भुला देने वाला भाषण नहीं है। सम्भव था कि दिल्ली में भी इसकी कोई प्रतिक्रिया हो, क्योंकि अंग्रेजी अखबारवालों ने उस भाषण पर बड़ी गम्भीरता से टीका की थी और लिखा था कि इस विषय पर यह अन्तिम भाषण है।

यह बात वर्षों पूर्व की है। तब से दुनिया पूर्ववत् अपनी कीली पर घूमती रही। जैसा कि अनुमान था कोई परिवर्तन शिक्षा-जगत में नहीं हुआ। हां, वह भाषण और उसी सम्बन्ध से विमल बाबू सदा स्मरण रहते हैं। मुझे उन लोगों पर बड़ी श्रद्धा होती है जो शिक्षा-सुधार में दिलचस्पी प्रकट करते हैं, क्योंकि अपनी दृष्टि में देश की प्रमुख समस्या अगर कोई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

है तो यही है। यही कारण था कि विमल बाबू से मिलने की आतुरता प्रबल होती गयी।

गांव के पास जाने पर दो बातें मालूम हुई। एक को सुनकर दुःख हुआ और दूसरी बात पर्याप्त हर्षवर्धक के साथ विस्मयजनक थी। एक यह कि वे इन दिनों बीमार होकर लगभग तीन महीने से शय्या पर पड़े हैं। दूसरी बात यह रही कि वे ही यहां चलनेवाले आदर्श इण्टर कॉलेज के व्यवस्थापक हैं। एक प्राइवेट स्कूल का मैनेजर वैसी बातें निर्भीकता से व्यक्त कर रहा था? कितना महान है वह! सच है कि दुनिया सत्पुरुषों से रिक्त नहीं है। ये वे मुट्ठी भर लोग हैं जो सत्य को आश्रय देकर संसार में सन्तुलन स्थापित करते हैं। काश, हमारे सभी स्कूल मैनेजर विमल बाबू की भांति होते! शिक्षा की संस्थाएं पवित्र उद्देश्य से अनुप्राणित होती। छात्र, अध्यापक, प्रधान अध्यापक और व्यवस्थापक में एकप्राणता होती! एक दूसरे को भक्षक न समझता! इसी सिलसिले में उस आदर्श विद्यामंदिर के दर्शन की भी इच्छा जागृत हुई जिसे विमल बाबू जैसा सत्यवक्ता चलाता है। मगर, सर्वप्रथम तो उनसे ही मिलना था। मिलने का बहाना भी नहीं खोजना था। मन ही मन मैंने निश्चय किया कि पूछूंगा कि आखिर हमारे देश में कबतक शिक्षा की दुनिया में इस प्रकार भ्रष्टाचार चलेगा? कबतक जानबूझ कर सरकार आंखें बन्द किए रहेगी? कबतक राष्ट्र के कर्णधार शिक्षा के नाम पर पैसा खर्च करके उदण्डता और बेकारी खरीदते रहेंगे?

जिस समय नौकर ने मुझे जलपान के उपरान्त विमल बाबू के कमरे में पहुंचाया उस समय दिन के तीन बज रहे थे। एक ऊंचे पलंग पर दरवाजे की ओर सिरहान करके वे एक साफ और मोटे गद्दे पर सोये हुए थे। सारा शरीर मुलायम लिहाफ के भीतर ढका था। बाहर केवल सिर दिखाई पड़ रहा था जो तकिए के सहारे पड़ा था। आंखें बन्द थी। कमरे में सिरहाने की ओर एक कुर्सी रखी थी। आलमारी पर दवाओं की शीशियां रखी थी। कोने में टेबुल पर फलों की टोकरी थी। मेरे पहुंचते ही पैरों की आहट से वे मेरा आना जान गए और प्रणाम को संभवतः अनसुना करके मेरी ओर बिना देखे बोले—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS MoE-Grant-

'तुम आ गए बेटा ! अच्छा बैठो ! बहुत जरूरी बातें करनी हैं।'

मैं बिना परिचय के व्यक्त की गयी इस आत्मीयता से एकदम हैरत में पड़ गया। क्षण भर रुककर वे फिर बोले—

'जमाना खराब आ गया है। फूंक-फूंककर कदम बढ़ाना है।·· हम लोग बहुत अभागे रहे कि हमीं लोगों के होते जमींदारी टूट गयी। यह तो संयोग की बात थी कि यह स्कूल हाथ लगा नहीं तो···।'

मैं तो आसमान से जैसे गिर पडा। यह कौन-सा स्वर निकल रहा है ? जमींदारी की जगह स्कूल आ गया ? सांस रोककर उत्सुकतावश सुनना ही उचित समझा। अपनी बात तो ताक पर रह गयी।

'···स्कूल चलाना हंसी-खेल नहीं है। कठिन चक्रव्यूह रचना पड़ता है। कभी-कभी सरासर हलाहल घोंटना पड़ता है।···देखो आज मैं तुम्हें बता रहा हूं। यह सेवा और परोपकार ही नहीं, जीविका और व्यापार भी समझो। हम समय और श्रम के साथ धन भी लगाते हैं। दौड़-धूप में खून सुखाते हैं। दर-दर की खाक छानते हैं। आखिर क्यों ?·· सारे संसार की यही बात है। नेताओं को देखो, अधिकारियों को देखो। और तो और, अपने मंत्रियों को देखो। सगे-सम्बन्धियों तक मालामाल हो गए···।'

मेरे पांव तले की जमीन खिसकने लगी। ब्रह्माण्ड घूमने लगा। सांसें जोर-जोर से चलने लगी। अरे, मैं यह सब क्या सुन रहा हूं ? मगर सुनना अभी और था—

'···एक दिन तुमने कहा था कि अध्यापकों का वेतन पूराकर समय से दिया जाय तथा स्कूलों को वास्तव में आदर्श बनाया जाय। उस दिन तो मैंने कुछ नहीं कहा परन्तु आज तुम्हें बताना है। थोड़े में कहूंगा, अधिक समझना। यदि एकदम आदर्श बन जाओगे तो तुम्हारे पैर कहां टिकेंगे ? ···मैंने अपने बाल धूप में नहीं सुखाए हैं। जीवन में बड़ा सम्मान मिला। बड़ी-बड़ी सभाओं में भाषण किए। अधिकार और न्याय की आवाज को ललकार कर बुलन्द किया है मैंने बेटा···।'

अब मेरी समझ में आया कि यह बेटा कौन है और प्रसंग क्या है ? शायद मैं विमल बाबू के पुत्र की जगह पहुंच गया था। मैंने अनुभव किया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

कि मेरी स्थिति वड़ी नाजुक है। जब विमल बाबू पर यह प्रकट हो जायेगा कि उनकी निजी बातों का श्रोता उनका पुत्र न होकर संयोगवश गैर आदमी है तो उनकी क्या दशा होगी ? मुझे यों चुपचाप किसी के मन की चोरी का अधिकार ही क्या ? वास्तव में मैं किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गया। भाग उठने की इच्छा हुई परन्तु पैर जकड़ गए। अनेक विचारों के बवण्डर ने उधर मन को भी किरकिरा कर दिया। पाषाणवत् वैठकर सुनता रहा—

'···वे सिद्धान्त ही वातें अपनी जगह पर एकदम ठीक हैं। मगर यहां यही ठीक है। सरकार भी इसे जानती है। रही शिक्षा की बात, सो बेटा में तुम्हें पते की बात बता रहा हूं। शिक्षा न स्कूलों में है, न मास्टर में है और न पुस्तक में है। वह विद्यार्थियों के ललाट में होती है। पढ़नेवाला वैसे ही पढ़कर निकल जायेगा और बुद्धू लोगों के कान में साक्षात् सरस्वती वीणा बाजायें तो भी कुछ नतीजा नहीं निकलने का।···यह सब खेल है। स्कूल खुले हैं। पढ़ाई हो रही है। मास्टर हैं, कुछ पा रहे हैं। बेचारों का गुजर हो रहा है। हां, असली काम तो अभी बाकी रह गया··· मेरे बाद तुम्हीं को मैनेजर बनाने की तजवीज हो रही है। क्या तुम मेरी परम्पराओं का निर्वाह करोगे ? बोलो।'

इस प्रश्न ने मुझे हिला दिया। अब समय था कि मैं भाग निकलता पर एक क्षण की जड़ता ने कुछ और कर दिया।

'बोलो ? चुप क्यों हो ?' कहकर मेरी ओर विमल बाबू ने जो देखा तो मेरा खून सूख गया।

'ऐं ? आप कौन हैं ?' वे चारपाई पर उठ बैठे।

'मैं···मैं···एक अध्यापक हूं।'

'अध्यापक ? तुम अध्यापक हो ?'

विमल बाबू एकदम अस्त-व्यस्त हो गए।

इधर-उधर देखकर वे जोर से चिल्लाए—

'कोई है जी ? चलो। दौड़ो। चोर ! चोर !! चोर !!!'

—परन्तु अब मैं वहां कहां था। छूटते ही सिर पर पैर रखकर भागा। भाग्यवश जूता वहीं छूट गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

मेरा प्रोग्राम

तब मैंने गाजीपुर जाकर बिल भुनाने का प्रोग्राम बनाया। बेशक, मेरा भी कहीं आने-जाने का प्रोग्राम बनता है। ठीक उसी प्रकार बनता है जिस प्रकार मिनिस्टर, डायरेक्टर, कलक्टर और सबइंस्पेक्टर आदि साहब लोगों का प्रोग्राम बनता है। फरक यह होता है कि मेरा प्रोग्राम न कहीं लिखा-पढ़ा जाता है और न अखबार में छपता है। वह उसी प्रकार बन जाता है जिस प्रकार अनाड़ी हाथों से घोड़े का चित्र बनाने पर उभर आता है गदहा एक फरक और होता है जिसे यहां पढ़िये।

तो, मैं गाजीपुर के लिए चिउड़ी गठियाकर चला। कोई विशेष बात न होने पर भी न जाने क्यों समय से पहले स्टेशन पर पहुंचने पर बहुत खुशी होती है। ऐसे में कोई आकर कह देता है कि गाड़ी एक या दो या और अधिक घण्टे लेट है तो कैसा लगता है? मालूम होता है कि स्टेशन कितनी दूर चला गया! कहने की आवश्यकता नहीं कि यही काण्ड हो गया। ट्रेन पूरे तीन घण्टा लेट। बलिया से उधर कहीं लोगों ने जंजीर खींचकर उसे थउसा दिया है। मगर, उसी समय बलिया जाने वाली ट्रेन आ गयी और बलिया नाम कानों में ऐसा गूंजा कि वहां के होटल और मच्छर याद आने लगे। खोज से पता लगा है कि नीचे चारपाइया में से सूंढ़ निकाल-निकालकर और कोमल शरीर में गड़ा-गड़ाकर खटमल रोकेनहीं रहते तो मच्छर वहां के इन्सान समुदाय को टांग ले जाते। खैर, ये मच्छरी या खटमली करिश्मे तो नहीं परन्तु होटल मुझे जरूर याद आए और बिना और कुछ सोचे टिकट कटाकर उसी ट्रेन पर बैठ गया। धुंधले रूप में कुछ विचार इस प्रकार आए कि यहां बैठने की अपेक्षा चलते रहें और भोजन कर वापस आती ट्रेन से लौट आएंगे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

बलिया स्टेशन पर उतरकर सबसे पहले नल के पास बेंचपर बैठकर मैंने सारी चिउड़ी साफ कर दी। साढ़े तीन कुत्ते आकर सामने विभिन्न मुद्रा में, मानो उन्हें मुझसे कुछ पूछना है और इन्तजार कर रहे हैं कि कब मैं अपनी चर्वण-क्रिया का समापन करता हूं, चुपचाप बैठे रहे। उनके कारण मुझे यह नहीं अनुभव हुआ कि अकेले खा रहा हूं। जब तक पानी पीकर और हाथ-मुंह धोकर मैं निश्चिन्त नहीं हुआ वे खिदमत में डटे रहे। उनकी मौन सेवा सराहनीय रही। ट्रेन से उतरने पर बड़े-बड़े लोगों के स्वागत को सब लोग देखते हैं, परन्तु ऐसे साधारण जीवों के सहज स्वागत पर भी दृष्टि जानी चाहिए। मैंने सोचा कि शहर के किसी पत्रकार के यहां चलकर इस घटना को उनकी डायरी में नोट करा दूं।

स्टेशन से उतरने पर सामने शहर छा गया। अनायास मैंने अनुभव किया कि मैं ददरी मेले में आ गया। 'ददरी' नाम में कितना जादू है। बचनपन से ही इस मनमोहक नाम की छाया में खुशियों के थके पांव आराम करते आए हैं। मैंने मेला घूमने का प्रोग्राम बनाया। मेला अभी लगा नहीं था, परन्तु तब भी उसे देखा जाना कम मनोरंजक नहीं। बिना लगा या लगा हुआ या लगता हुआ या लगने से पहले मेला कैसा होता है ? मेरे मन में एक भारी कुतूहल जगा। लग कर जमा हुआ मेला तो सभी देखते हैं, मैं आज एक अधलगा हुआ मेला देखूं ! वास्तव में मेले का मूड आ गया।

हजामत बनने लगी। वह सैलून नम्बर तीन था। यानी स्टेशन से उतर कर पश्चिम ओर के निकास से निकलकर सड़क पर पश्चिम ओर बढ़े तो एक सैलून, दूसरा सैलून और यह तीसरा। एम दुबला-पतला युवक मास्टर घण्टों सिर के चारों ओर कैंची बजाता और कंघी खुरखुराता रहा। मैं सोच रहा था कि यह हजामत बन रहा है या ताजमहल ? अपना भी समय बरबाद कर रहा है और मेरा भी। इसके इतने संवारने की कीमत क्या है ? कल फिर वही दशा। यह तो तब सार्थक है जब सैलून में बने और तुरन्त निकल कर किसी को दिखाना हो। मगर, मैं शायद गलत सोच रहा था और भूल गया था कि यह गंवारों का गांव नहीं नगर है। यही कारण था कि कुछ अजीब मनोदशा में अठन्नी देकर निकला और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

सड़क पकड़ कर चलने लगा तो एकदम कचहरी में जा निकला।

अरे, मैं कचहरी में आ गया? खैर, कहीं आया तो! लोगों ने बताया कि कचहरी राष्ट्रपति केनेडी के शोक में बन्द हो गयी। एक वकील ने आलोचना की। उनका कहना था कि जिस दिन उनकी मृत्यु हुई उस दिन बन्द किया गया होता तो यह प्रकट होता कि मित्रता से प्रभावित होकर ऐसा हुआ है। यह राष्ट्रपति की अपील पर बन्द करना तो बलात् रोना हुआ। जो हो, कचहरी अचानक बन्द करने से यह तो हुआ कि सारे देश पर व्यापक प्रभाव पड़ गया। जब एक जिले की कचहरी में इतने लोग आए और काम न होने से इनकी क्या-क्या दुर्गति होगी तब पूरे देश का हिसाब तो बड़ा लम्बा-चौड़ा है। जिनकी तारीखें आज थीं उन्हें कल भी रहना है। एक दिन का हिसाब घर बैठा कर आए और रह जाना पड़ा एक दिन और।

बारह बज रहा था। परन्तु कचहरी की भीड़ वैसी ही जमी दिखायी पड़ी रही थी। बन्द होने का कोई लक्षण नहीं प्रतीत हो रहा था। दीन-दुखी लोग उसी प्रकार इधर-उधर भाग-दौड़ रहे थे। अवश्य ही यह जगह बहुत ही मनहूस जगह है। श्मशान की मनहूसी में तो एक शान्ति रहती है परन्तु इस कचहरी में अशान्ति का बोझ ऊपर से और ढहता आता है। यहां कोई सुखी और स्वस्थ आदमी (अधिकारियों और कर्मचारियों को छोड़ कर) नहीं आता। यह अजीब किस्म का अस्पताल है। कोई रोग से दबा आता है तो कोई रोगों का बण्डल लेकर दूसरों पर छोड़ने आता हैं। कोई चंगा होकर निकलता है तो किसी के गले पर छुरी चल जाती है। वकील लोग कुशल परिचारिकाओं से लेकर डाक्टरों तक का काम निभाते हैं।

स्वराज्य सुख के मधुर फलों की गन्ध का आभास भी यहीं मिलता है। अगर यह देखना है कि हम आज से बीस वर्ष पूर्व जहां थे ठीक उसी जगह आज भी हैं तो यहां आकर देखें। कुछ बातों में और नीचे गिरे। हायरी गंगा की धार-सी पवित्र जनता! तुम्हें, किसने इतना पतित बना दिया? राष्ट्र की सारी शक्ति तो आपस के झगड़ों में नष्ट हो रही है। झगड़ा चीन-भारत में उतना नहीं, जितना यहां भाई-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

भाई में है। डर है कि एक भाई भारत की ओर से सीना तानकर खड़ा होगा तो दूसरा सब कुछ भूल कर कहीं प्रतिशोध की गम में चीन की आड़ लेकर उसके सीने में छुरा न भोंक दे। इतने मामले-मुकदमों के होते राष्ट्रीय एकता भी क्या मजाक है। वास्तव में कचहरियों की ये इमारतें अंग्रेजों की गढ़ी हुई हैं। इनमें भारत को कमजोर करनेवाले तत्वों का मसाला ही प्रधान है। स्वराज्य पाकर हमने उस मसाले को और चोखा कर दिया। कौन नहीं जानता है कि कचहरियों का भ्रष्टाचार आज बीस गुना बढ़ गया है। पर इसके आगे ? कुछ नहीं। चलता है, चलने दो। हमें कहां ले जाएगा ? पता नहीं। जो लोग कहते हैं कि हिन्दुस्तान तरक्की कर रहा है वे लोग क्या सही बात कहते हैं ?

तीन बजे मालूम हुआ कि वह कचहरी सचमुच बन्द है। भीड़ छंट गयी। चार बजे शान्ति हो गयी। केवल इमारतें खड़ी रह गयीं। वे इमारतें जिनमें जिला बन्द है। नाम मात्र के लिए चाय की दूकान चल रही थी और मैं शायद अन्तिम आदमी नहीं था, जिसने एक कप कचहरी की, उस प्रसिद्ध दूकान की चाय चलते-चलते पी ली। दूसरी दूकानों की चाय में यह विशेषता है या नहीं, कह नहीं सकता परन्तु कचहरी की चाय में यह एक विशेष गुण दिखायी पड़ा कि पीते ही दिमाग तेजी से काम करने लगा। मुझे अपना प्रोग्राम सूझने लगा। ट्रेन अभी मिल सकती थी। तिरछे मैदान पार करता हुआ स्टेट बैंक के पास पिछवाड़े से स्टेशन पर पहुंचा देनेवाली सड़क पर पहुंचा।

याद आया कि यहीं नार्मल स्कूल के हास्टल में प्रमोद बाबू रहते हैं। संगी की याद वहां खींच ले गयी। परन्तु उन्होंने एक मिनट कुछ कहने का मौका दिए बिना एक साइकिल थमा दी और बोले, 'जहां चलता हूं चलिए'। मैंने सोचा ऐसा बढ़िया आदमी यदि जहन्नुम में भी चलता है तो साथ देने में कोई हर्ज नहीं। और सायकिल लिए उनके साथ जिस पहली दूकान पर हमला हुआ वह एक पान की थी किन्तु वस्तु जो 'ली गयी' कुछ और थी। वह काले रंग की एक हलवे की तरह गोली थी। नाम कुछ 'मस्त मोदक' जैसा उन्होंने बताया। प्रमोद बाबू अकेले नहीं थे शिवजी की पूरी बरात साथ चली। परन्तु यहां बरात के अभिरूप का नामो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

निशान नहीं था। सभी सभ्य और सुरुचि सम्पन्न सज्जन लोग थे और मैंने अनुमान लगाया कि कहीं कचरकूट का गहरा मामला है। तीन जगह पान खाकर और दो जगह सिगरेट जलाकर यह भोजनार्थी काफिला नगवा में श्री चौबे जी के यहां पहुंचा। कुछ भूख थी, वह भांग की गोली का जोर था और वहुत कुछ चौबे जी के स्नेहमय आतिथ्य का प्रभाव था, छककर लोगों ने छाती का कांटा निकाला। वहां से लौटने में चांदनी निकल आयी थी। सड़क पर साइकिलें दौड़ने लगीं। गोली ने अधिक जोर किया तो मुझे अपनी सवेरे खायी हुई चिउड़ी याद आने लगी। उसके कुछ दानें पाकिट में पड़े थे और इस समय वह इलायची का काम करने लगे। एक हाथ में लेकर उसे मुंह में फेंकने लगा। साइकिल का वैलेंस विगड़ गया। साइकिल झुकी तो सामने एक गढ़ा था। वह गढ़ा साइकिल को खींचने लगा। मुझे ठेस लगी। मैंने सोचा, यह गढ़ा नाचीज साइकिल को क्या खींचेगा, मैं स्वयं उसमें साइकिल ठेल दूंगा और मैंने जो झोंक में उधर जोर लगाया तो ऐसा विस्फोट हुआ कि नशा टूट गया। साइकिल उलटकर दूर चली गयी और मैं अलग कुक्कुटासन करने लगा। सवसे पहले चारों तरफ देखकर यह जानकारी की कि किसी ने देखा तो नहीं? संयोगवश और लोग आगे थे और शायद गोली का प्रभाव सब पर था। धूल झाड़कर आगे वढ़ा। ददरी मेले के समानान्तर सड़क जा रही थी। सरकस की ऊपरी वत्तियों की कतार झलमला रही थी। विन लगे मेले की क्षीण जगमगाहट और शान्ति वहुत जंच रही थी। परन्तु अधिक प्रभाव था नींद का। खूब सोने की इच्छा कर रही थी।

परन्तु आश्चर्य की वात कि रात भर नींद नहीं आयी। गोली के प्रभाव से मुंह सूख-सूख जाता और पानी का गिलास पर गिलास खाली होता जाता। इसका असर मेरे दूसरे दिन के प्रोग्राम पर पड़ा और सुवह उठकर जो नींद में डूवा तो फिर चार वजे शाम को ही नींद टूट सकी। यह वही समय था कि शरीफ लोग मेला देखने जाते हैं। सरकस का वक्त साढ़े पांच लिखा है। साढ़े तीन सौ कलाकारों का विज्ञापन है। कलाकार तो एक ही काफी होता है। जहां इतने कलाकारों का जमघट है वहां की रंगीनी का क्या पूछना। तमाशा के नाना प्रकारों में मेरी आस्था सरकस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

पर अधिक है। कम से कम पैसा तो वसूल हो ही जाता है।

मैंने सोचा कि एक रिक्शा ले लूं परन्तु तभी प्रमोद की याद आयी। वलिया शहर ऐसा है कि यहां किसी भी स्थान से किसी स्थान पर जाने में बीस मिनट से अधिक नहीं लगता। तब बीस मिनट की मटरगश्ती ही सही। गवर्नमेंट स्कूल में खेलकूद-प्रतियोगिता हो रही थी। प्रमोद बाबू सुबह से ही वहां डटे थे। यह भी एक अच्छा पर्व है। जिले के मास्टर और विद्यार्थी एकत्र होते हैं। देखने वालों की आंखें नहीं भरतीं। यह अपना दुर्भाग्य है कि ऐसे अवसर पर मुझे उलटा ही सूझने लगता है। स्वयं को तो कॉलेज आदि देखने को नसीब नहीं हुआ और न सूट-बूट का सौभाग्य मिला। दूसरों को देखकर जलना क्यों? वास्तव में मेरी जलन इसलिए कि कोई क्यों इतनी कीमती पोशाकें पहने हैं और मैं इस प्रकार टाट लपेटे घूम रहा हूं। मेरी जलन का कारण वह मनोवृत्ति है जो इस पोशाक में छिपी है। अब यह ग़लत सिद्ध होता जा रहा है कि आदमी विलायती पोशाक में भारत का मन बनाए रख सकता है। लोग 'साहब' के मूड में रहना, एक विशेष प्रकार के अंग्रेजियत में ढले-ढले से जीवन बिताना और विलायती संस्कारों को बटोरना कर्त्तव्य समझने लगते हैं। शिक्षण संस्थाओं में आज ढेर के ढेर काले अंग्रेज घूमते मिलते हैं। खास-तौर से ऐसे बटोर में तो बस अंग्रेज और अंग्रेजी के ही दर्शन होते हैं। भगवान बचाए देश को।

मैं सरकस देखने चला। चौक में अधिक भीड़ मिली। ददरी महकने लगी। श्री बालेश्वर जी के मंदिर वाली सड़क से होता हुआ बांध पर पर पहुंचा तो सामने था विशाल सरकस। खूब जगह घेरकर घेरा बनाया है। सामने विशाल आंगन की तरह से झुण्ड के झुण्ड लोग खड़े। कैसा अह्लाद है सबके मुंह पर? वास्तव में सरकस से अधिक मुझे ये सर्कस देखने वाले अधिक अजीब और आकर्षक लगते थे। मैं घण्टों खड़ा रहा और वहां अकेले घूमता रहा। भीतर आखिरी घण्टी बजी और खेल शुरू हो गया। बाहर का खेल देखकर ही मन भर गया था। शायद ही ऐसा स्वाभाविक और सजीव भीतर का खेल हो। आज मैंने जाना कि बिना टिकट का तमाशा भी कम मनोरंजक नहीं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

थोड़ी देर में लौट आया। यह प्रोग्राम भी फेल हुआ, परन्तु चलते-चलते वह गाजीपुर वाला प्रोग्राम खूब कड़ाई के साथ पास हुआ कि सवेरे की गाड़ी न छूटे।

में सोच रहा हूं कि इस युग में कोई पूर्व निर्धारित कार्यक्रम सम्पन्न और कार्यान्वित हो जाय तो इसे प्रभु की असीम अनुकम्पा ही समझना चाहिए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

मार्ग मनोविज्ञान

गांवों की दुनिया। कहीं हरियाली से लदी, कहीं खाली धूसर धरती की छाती पर सांप की तरह लोटते हुए रास्ते। कहीं पतले, कहीं चौड़े। कहीं चिकने, कहीं ऊबड़-खाबड़ और भोड़े। ये विविध प्रकार के रास्ते, कुछ पहुंचाने वाले हैं, कुछ भटकाने वाले हैं। कुछ उलझाने वाले हैं, कुछ भुलाने और बहकाने वाले हैं। इन सबों में मुझे प्रिय हैं ये बहकाने वाले रास्ते! कोई चारा नहीं, कोई दूसरा सहारा नहीं, कोई अन्य युक्ति नहीं, कोई खबर भी नहीं और ये लिए जा रहे हैं, लिए जा रहे हैं; चढ़ाये चले जा रहे हैं। ठीक मनुष्य के भाग्य की तरह, आशा के अनदेखे सूत्र की तरह और समय की अटूट धारा की तरह। इसलिए आज मेरी उस प्रिय पगदण्डी ने लिए-लिए ले जाकर एक जगह खड़ा कर दिया तो मैं विस्मित हो उठा। न जाना हुआ और न पहचाना हुआ। अरे, मैं कहां किस गांव में चला आया? पीछे मुड़कर देखा तो वह पगदण्डी पड़े-पड़े मानों लापरवाही से मुसकरा रही थी।

'कहो भाई यह कौन गांव है?'

'......'

'अरे; पहलवान! आप से ही पूछता हूं। यह कौन गांव है?'

'......'

वह मोटा, थलथल आदमी एक क्षण तक चिहाचिहाकर मेरी ओर देखता रहा। ऐसा लग रहा था मानों मैं कोई अद्भुत जन्तु होऊं! दूसरे क्षण बिना कुछ बोले आगे बढ़ गया—चुपचाप, धीरे-धीरे मगर कुछ अकड़ती हुई चाल से। मेरी युक्ति विफल हो गयी। तिवारी जी से यह युक्ति मैंने सीखी है। किसी देहाती आदमी से काम लेना हो और वह कुछ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

हट्टाकट्टा दिखाई दे, या लाठी लिए ऐंठता हुआ चल रहा हो, या ढीलाढ़ाला चौड़ी बांहवाला कुर्त्ता पहने हो तो उसे पहलवान कहकर पुकारना चाहिए। यही मैंने यहां किया। युक्ति निष्फल तो हुई जरूर परन्तु ऐसा लगा कि 'पहलवान' कह देने मात्र से उसका वजन काफी बढ़ गया और चाल में गुरुता आ गयी। धन्य हो पहलवान !

मैंने गांव में प्रवेश किया। परन्तु यह क्या ? गांव में घुसा नहीं कि उसके बाहर हो गया। अजीब गांव है। गांव नहीं, वास्तव में यह डेरा है। गौर से देखने पर पता चला कि बाहर से गांव के एक छोर से लगनेवाले इस स्थान पर केवल दो-चार ही घर हैं। इतना अवश्य मालूम पड़ा कि खाते-पीते सामान्य गृहस्थ हैं। घर खपरैल से छाए गए हैं। एक ओर बैलगाड़ी खड़ी है। सामने मैदान में कटे हुए धान की एक क्यारी में पड़ी एक छोटी झोपड़ी के आगे कोल्हू चल रहा है। ईख पेरी जा रही है। चूल्हा झोंका जा रहा है। गुड़ पक रहा है। उसकी सोंधी-सोंधी सुगन्ध उठकर नाक और मन को चुनौती दे रही है। यहां का सारा जीवन इस कोल्हुआड़े पर केन्द्रीभूत हो गया है। यहां अधिक सरसता है, प्रफुल्लता है और सजीवता है। शेष चारों ओर एक सुन्दर-सा सुनसान है। हंसती-सी निर्जनता है। चुपचाप घर हैं। खड़े-से पेड़ हैं। पड़ी-सी ईख की ढेरी है। केवल गतिशील यह कोल्हू है। ऊपर चमकती धूप है। भीतर असली गांव की आत्मा है।

घर से एकदम सटे खेत हैं। सरसों फूलकर घर के आगे स्वर्गीय वैभव का खलिहान कर रहा है। ऐसा लगा कि पीली पगड़ी बांधे अगनित सरेहि के सिपाही यहां घर की रखवाली करने के लिए खड़े हैं।

घर में सिर्फ एक दरवाजा है। यही मुख्य द्वार है। सो भी किसी कारणवश बन्द है। किसी ओर खिड़की या जंगला नहीं है। शायद लोग इसकी आवश्यकता नहीं समझते। पीली मिट्टी से पुता यह घर कितना साफ़ है। उसकी चिकनाई, शीतलता, पवित्रता, स्वच्छता और चमक आंखों पर चढ़ रही है। मन पर उतर रही है।

मैं सोच रहा था कि जितना स्वच्छ घर है उतना ही स्वच्छ आगे का आंगन है परन्तु, तुरन्त ही यह सोचकर कि यह आंगन नहीं रास्ता है—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

आम रास्ता है, जिससे होकर मैं यहां तक आ गया—भारी कौतूहल हुआ। बरबस मुंह से निकल पड़ा—वाह ! रास्ते को झाड़ बुहारकर लोगों ने इतना साफ कर रखा है ! कहां गन्दगी है ? यहां कहां घूर है ? यहां कहां पनाला है ? कहां सड़न है ? कहां मच्छर भनकते हैं ? आदमी यहां भी रहते हैं, जीवन यहां भी है और आदमी हमारे गांव में भी रहते हैं परन्तु यहां की सफाई और मोहकता तो एकदम मन को अपनी ओर खींच लेती है !

सवाल था चलने का। पश्चिम की ओर आंखें उठाईं तो एक मटर का हरा-भरा खेत, उसके बाद नाटे कद की पीले-पीले फूलों वाली हरी-हरी अरहर का एक खेत और उसके बाद एक गांव ! गांव पर गांव ! लगातार गांव ! गांवों की माला ! हरी-भरी माला ! यही तो भारत है !

भावुकता को अलग हटाकर मैंने इस भूल-भूलैया पर ध्यान दिया। और आगे बढ़ने पर आ गया घर का पिछवार ! प्रश्न था कि रास्ता कहां है ? किधर से होकर जाना है ? वह पगदण्डी तो यहां पहुंचाकर इस प्रकार गायब हो गयी जैसे जंगल में दूर पहुंचा कर राजा भानुप्रताप के सामने से वह माया का वाराह विलुप्त हो गया। पता नहीं किधर से लोग आते-जाते हैं। किसी ओर मार्ग का कोई चिह्न नहीं दिखाई पड़ता। ऐसा तो नहीं कि यह अन्तिम मंजिल है ? मुझे वे अमर पंक्तियां याद आ गईं—

'इस पथ का उद्देश्य नहीं है
श्रान्त भवन में टिक रहना,
किन्तु पहुंचना उस मंजिल पर—
जिसके आगे राह नहीं !'

कुएं पर खड़ा-खड़ा मैं सोचने लगा कुछ दूसरी ही बात। मैं सोच रहा था कि बाल-मनोविज्ञान, जीव-मनोविज्ञान और साधारण-असाधारण मनोविज्ञान की ही भांति मनोविज्ञान की एक शाखा मार्ग—मनोविज्ञान की भी निकलनी चाहिए। अब तक मनोविज्ञान में पश्चिम की ही अधिकांश नकल हुई है। प्रशंसनीय प्रयास नहीं। भारत की कुछ अपनी खोज भी होनी चाहिए। मनोविज्ञान के क्षेत्र में उसकी कुछ मौलिकता सामने आनी चाहिए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

भारत गांवों का देश है। गांव की शोभा सड़कों में नहीं पगदण्डियों और साधारण रास्तों में निहित है। इनकी विविधता में सर्वमान्य एक-रूपता का सिद्धान्त क्या उसी प्रकार खोज निकालना उपयोगी नहीं है जैसा मनोविज्ञान में मानव की विभिन्नता में से एकरूपता के सिद्धान्त निकाले जाते हैं ? मनोविज्ञान ने आत्मा, चेतना और मन को छोड़कर आज व्यवहार को अपने अध्ययन का विषय बनाया है। मार्ग-मनोविज्ञान मानव-व्यवहार के कितने निकट होगा, यह लिखने की आवश्यकता नहीं।

अजीब-अजीब डगरियां हैं। इनका घुमाव, छिपाव, लगाव, बिलगाव, स्वभाव और बनाव सब चित्र-विचित्र ! किस ढंग की पगदण्डी कितनी दूर जाकर किसी मुख्य रास्ते से मिलती है, किस ढंग के रास्ते दूर तक जाने वाले होते हैं, किस प्रकार की डगर पर पैर नहीं बढ़ाना चाहिए, कौन मार्ग विश्वसनीय नहीं, बाजार को जाने वाले मार्ग की कौन विशेषताएं होती हैं और खेतों के बीच से किस ढंग के रास्ते किसानों के निजी काम-वश लग जाते हैं और उन पर जानेवाले राहगीर भटक जाते हैं। ये सब बातें विचारणीय हैं। इसी प्रकार रास्ता, भूल जाने पर क्या करना चाहिए, रास्ता भूलने पर कैसे व्यक्ति से पूछना चाहिए और जाते-जाते कंचन-मृग की भांति रास्ता कहीं लुप्त हो जाय तो क्या करना चाहिए, विशेषकर तब जबकि बतानेवाला कोई न हो, ये सब तथा इस प्रकार की अनेक बातें हैं जो खोज करने पर काफी उपयोगी और मनोरंजक हो सकती हैं। इस कहावत में भी एक मनोवैज्ञानिक तथ्य छिपा हुआ है जो रास्ते के बारे में गांवों में कही जाती है—

'बरखा आए राह बेराह
चैते फूटीं राहे राहे।'

पता नहीं रूस-अमेरिका और ब्रिटेन आदि में हमारे देश जैसी कवित्व-मय तन्वंगी पगदण्डियां होती हैं या नहीं ? यदि होतीं तो वहां के मनस्वी लोगों द्वारा मनोविज्ञान की यह एक शाखा अछूती नही रहती और इसका विस्तार हुआ होता। खैर, यह काम अब अपने देश से होना चाहिए। अब तो 'गांवों में चलो' का नारा भी काफी जोरदार रूप में बुलन्द है। जब

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

नेता, प्रोफेसर, डाक्टर और अधिकारी आदि गांव की ओर लौटने के लिए ललकारे गए तो भला मनोवैज्ञानिक ही क्यों सबसे पीछे रहे ! ये लोग भी गांव में आए और मैं सोचता हूं कि उनके आते ही पगदण्डियों (ग्रामीण-मार्ग) की सौन्दर्यमयी सजीवता और भेद भरी मार्मिकता उन्हें अवश्य ही आकर्षित करके कलम चलाने के लिए विवश कर देगी।

उस कुएं पर खड़े-खड़े, अपनी समझ से मैंने मार्ग-मनोविज्ञान का उद्घाटन ही कर दिया। जब सूरज डूब गया तो होश हुआ। जाना दूर था। इधर इतना सोचने के बाद स्वयं रास्ता खोज निकालने की झक सवार हो गई थी। यह मार्ग-मनोविज्ञान का प्रायोगिक आरम्भ था। मैं सोच रहा था कि ऐसा तो संभव नहीं कि पीछे वाला उतना चालू रास्ता इसी गांव में आकर खत्म हो जाता हो ! जरूर आगे बढ़ना होगा। कुएं पर से उतरकर मैं उस जगह खड़ा हुआ जहां सहज रूप में रास्ते को आना चाहिए किन्तु वहां खेत में पानी पहुंचाई जानेवाली नाली के अतिरिक्त रास्ते का कोई चिह्न नहीं था। अचानक उस नाली में जो एक-दो दिन पानी चलने के कारण अभी भी कुछ गीली थी कुछ पगचिह्न दिखाई पड़े और फिर तो यह समझते देर नहीं लगी कि वास्तव में यह रास्ता ही है। स्थान की बचत के लिए इसे नाली बना दिया गया। एक पंथ दो काज। रास्ते के खोज की खुशी थी। आगे बढ़ा।

तीन-चार घर का एक और ऐसा ही टोला मिला। रास्ता बढ़ता गया। वही सफाई, वही चिकनाई और वही सरलता ! ज्ञात हुआ कि इस गांव का कोई खास नाम नहीं। अहीर भाइयों का टोला है। फुटकर बसा है। यह भी पता चला कि यद्यपि मैं रास्ता भूल गया हूं पर जिस रास्ते पर चल रहा हूं। वह हमें अभीष्ट स्थान तक पहुंचा देगा। गति में तेजी आ गई। मेरे मार्ग-मनोविज्ञान ने बता दिया कि रास्ता अब ऐसा ही साफ है अतः निश्चिन्त भाव से तेजी से बढ़ना चाहिए।

तेजी से चलते-चलते अचानक पैर जब दुर्गन्धमय सड़ान्ध में धंस गए तो मार्ग-मनोविज्ञान को झटका लगा। आंखें उठीं तो चूने से धप्प··· धप्प···एक गगनचुम्बी महल से टकराकर चौंधिया गईं। वास्तव में यह इसी प्रासाद से बहनेवाले पनाले का पानी था। जी भनभना गया। आगे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

कुआं था, परन्तु उसके चारों ओर भी वही सड़ान्ध और पसरा हुआ कीचड़। याद आए पीछे के टोले। समझा, यहां तीनों जून घर में चूल्हे जलते हैं, स्नान होते हैं, कपड़े साफ किए जाते हैं, वर्तन मले जाते हैं और पानी के अनेक काम हैं क्योंकि यहां वैभव है, सभ्यता है और आधुनिकता है और उधर यह सब कुछ नहीं ? नंगा क्या नहाए और क्या निचोड़े ? वहां क्यों न सफाई रहे ? और अब तक चिन्तित मार्ग-मनोविज्ञान में एक अध्याय और मैंने इस प्रकार जोड़ दिया कि जहां गांव का प्राकृतिक जीवन है, जहां गंवार रहते हैं, वहां रास्ते में साफ पानी भले वहे किन्तु गन्दा पनाला नहीं होगा और जहां नागरिकता का उच्च और संयमित-नियन्त्रित सम्पन्न जीवन है वहां चारों ओर यहां तक कि बीच रास्ते पर खतरनाक गन्दगी होगी। अतः सावधान होकर चलना चाहिए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

भाड़

'अरे···रे···रे···रे···कौन ? तिवारी ? वर्षों बाद मिले मित्र ! कहो क्या कर रहे हो ?' मैंने तिवारी को भुजाओं में भरकर भेंटते हुए कहा।

'भाड़ झोंकता हूं। और क्या करने लायक हूं ? अपना कहो, क्या समाचार है ? तिवारी ने कहा और एक दूसरे का हाथ पकड़े हम लोग स्टेशन से बाहर चले आए। गाड़ी घंटाभर लेट थी।

'सो तो वही काम मैं भी करता हूं मित्र !' मैंने कहा। 'अन्तर यह है कि तुम मुहावरे के रूप में और मैं वास्तविक रूप में भाड़ झोंकने का काम करता हूं।' तिवारी ने कहा और इस प्रकार मेरी ओर देखने लगा जैसे मुझे उसके कथन पर अविश्वास नहीं करना चाहिए।

'अर्थात् ?' आश्चर्य में डूबकर मैंने पूछा। 'अर्थात् क्या ? सचमुच मैं भाड़ झोंकता हूं। अब मैं अध्यापक नहीं, भड़भूजा हूं। तुम सोचोगे कि मैं ब्राह्मण हूं और बी० ए० पास हूं परन्तु मित्रवर आंखें खोल कर देखो तो आज जाति-पांति कुछ नहीं। जो गरीब और मजबूर है वे नीची जाति के हैं और जो सम्पन्न तथा समर्थ हैं वे उच्च जाति के हैं ! और बी० ए० की डिग्री ? फूंक दिया तेल छिड़ककर मैंने।···तुमसे परिचय हुआ तो मैं अध्यापक था। दुनिया का सबसे निरीह जीव ! अखिल आपदाओं का शिकार ! ! शोषित, लांछित, कर्त्तव्यच्युत और अपमानित ! ! !···अब मैं अपेक्षाकृत सुखी और संतुष्ट हूं। मेरी दुकान में सदा अग्नि प्रदीप्त रहती है। समाज को पका हुआ माल देता हूं। न मैं धोखे में हूं न दूसरों को धोखा देता हूं।···काशी कभी आओ तो देखोगे कि मैं अब गुलाम नहीं !'

तिवारी का वक्तव्य सुनकर में स्तब्ध हो गया। मुझे अपने कानों पर विश्वास नहीं हो रहा था। सोच रहा था कि कहीं यह व्यक्ति कोई गहरा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

मजाक तो नहीं कर रहा है। पूछा—

'लेकिन भाई हमें विश्वास नहीं होता।'

'इसमें अविश्वास की कोई बात नहीं। एकदम साफ-सी चीज है।' तिवारी ने कहा।

'तुमने विद्यालय क्यों छोड़ा ?'

'वह अपमान और घृणा से भरी एक लम्बी दास्तान है। क्या सुनोगे ?

'जरूर सुनूंगा।'

इसके बाद मेरे मित्र श्री आनन्द शंकर तिवारी ने स्कूल से अपने निष्कासन की कहानी विस्तार पूर्वक बताई। कहानी सुनते-सुनते मैं उसमें खो गया। कहानी क्या है; अध्यापक जीवन का एक सजीव चित्र ! एकदम मुखर ! एकदम आकर्षक !

लीजिए, कहानी मेरे मित्र की और भाषा मेरी। वस्तु मेरे मित्र की और सज्जा-शैली मेरी।

मई के दिन थे। लू चल रही थी परन्तु वह इतना नहीं सताती थी जितना छह महीने की बाकी तनखाह ! खाली हाथ जीवन की गाड़ी कैसे सरक रही थी, यह खोजपूर्ण बात थी। मौलवी साहब को जूते पर कजरी लपेट कर ब्रश करते देखा—

'कहिए, बड़ी तैयारी हो रही है ?' तिवारी ने कहा।

'परसों वेतन मिलने वाला है।'

मौलवी साहब ने वैसे ही ब्रश घुमाते हुए कहा, 'एक महीने का मिलेगा और अगर लग्गी लग गई तो दो महीने का मिलेगा।'

अपनी आन्तरिक प्रसन्नता को दबाते हुए तिवारी ने कहा, 'मगर हमें विश्वास नहीं हो रहा है।'

'इसमें विश्वास न करने की क्या बात है ? क्या हम लोग काम नहीं करते हैं ?'

'काम तो छह महीने से कर रहे हैं।' तिवारी ने कहा, हर महीने हजारों रुपये दिखाई पड़ते हैं परन्तु पुनः वे ऐसे गोलक में जा पहुंचते हैं जहां से उनकी गन्ध भी नहीं मिलती।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

'बड़ा मुंह है। बड़ा खर्चा है। सेवा करते चलिए जनाब ! मेवा जरूर मिलेगा।'

'क्यों नहीं ? और वह मिलेगा परलोक में शायद।'

'उसे भी तो बनाना है।'

'और उस परलोक को बनाने के लिए आज स्कूलों से अच्छी कोई जगह नहीं है।'...और सुनिये, मैनेजर साहब हम लोगों को तपस्वी कहते भी हैं।'

'क्या बेजा कहते हैं ?' मौलवी साहब ने कहा।

'एक सौ आठ रुपया वेतन पानेवाला एक आने की बूट-पॉलिश वाली डिब्बी न खरीद कर जूते पर कजरी रगड़ रहा है। अब और कितनी तपस्या चाहते हैं मौलवी साहब जी ?'

'अरे यार यह तो इसलिए कर रहा हूं कि कोई यह न समझे कि मियां गरीब हो गए।'

'तब यही क्यों नहीं कह रहे हैं कि वेतन की आहट मिलते ही तबियत फुरफुरा उठी है।'

'बदे की बात है दोस्त तिवारी !' अबकी बार मौलवी साहब के चेहरे पर भारी वेदना उभर आई।

'एकदम पक्की खबर नहीं है क्या ?' तिवारी ने कहा, 'अभी-अभी तो आप कह रहे थे कि अगर लग्गी लग गई तो दो महीने का भी मिल सकता है ?'

'हां..., मगर यह लग्गी हम लोगों की ओर से नहीं, मैनेजर साहब ने कहीं ऊपर किसी आफिस में लगाई है।...कोई फ्लड-ब्लड की मंजूरी होगी।'

'कौन कह रहा था ?'

'अरे भाई शर्मा ने तो कहा है कि 'महक' रहा है।'

'बेचारा।' तिवारी ने कहा, 'बराबर वेतन सूंघा करता है। ऋण के बोझ से इस प्रकार दब गया है कि सांस लेना कठिन है। दोस्तों के सामने जब कोई टोक देता है तो पानी-पानी हो जाता है।'

'मौलवी साहब ने जूते की जोड़ी को एक स्थान पर रख दिया और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

खड़े होते हुए लम्बी सांस लेकर कहा—'मत दिलाओ याद तिवारी, दिमाग गरम हो जाता है।'

'गरम भी होगा, ठंडा भी होगा। अध्यापकों के दिमाग की वकत ही क्या ? एक मामूली वनिहार भी मजदूरी न मिलने पर दूसरे ही दिन रास्ता नाप लेता है!'

'रास्ता तो हम भी नाप लेंगे चौदह मई के वाद!'

'···तो मैनेजर साहव की वीन पर नाचेगा कौन ?' तिवारी को ऐसा लगा कि कड़ुवी वात कह गया। मौलवी साहव का मुंह फैल गया। वे उसकी ओर देखने लगे क्षण भर वाद बोले—

'देखो तिवारी! नाचने वालों में से मैं नहीं हूं। अगर कोई सख्श है ऐसा तो वह तुम हो।'

'मैं नहीं, वह तुम्हीं हो।' तिवारी ने कहा।

अव मौलवी साहव भड़क उठे। बोले—'क्या मैंने ही गत वर्ष मीटिंग में मैनेजर साहव द्वारा जरा-सा मुसकराकर वाहवाही देने पर सेवा के नाम पर चार महीने का वाकी वेतन छोड़ देने वाला, साथियों का पेट काट लेने वाला प्रस्ताव मान लिया ?'

'उसे तो मैंने इसलिए मान लिया।' तिवारी ने कहा—यदि खुशी से नहीं मानते तो झख मारकर यानी मजवूर होकर जबरदस्ती मानना पड़ता।···मगर तुम वताओ कि क्या तुमने एक सौ बीस रुपए पर हस्ताक्षर कर केवल अस्सी लेते हुए क्या अध्यापकों की वरवादी और उनके वलिदान का रास्ता नहीं खोल दिया ?'

'यह तो जैसी तुम्हारी मजवूरी वाली वात थी वैसी ही वात रही, लेकिन जो तुम मैनेजिंग कमेटी के सदस्यों और मैनेजर साहव के यहां नित्य सलामी दागते फिरते हो और उनके आगे दुम हिलाया करते हो वह क्या है ?' मौलवी साहव बोले।

'देखो वेकार मत वको।' तिवारी ने कहा—'खुद ही तो रात-दिन चुगली का चोगा पहने रहते हो! शिकायतों की एजेन्सी ले रखी है! क्या मैं ही प्रिंसिपल साहव के यहां इधर की बातें रोज पहुंचाया करता हूं ?'

'गलत समझा है आपने जनाव! जिसे जी-हुजूरी के वल पर स्कूल में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

रहना है, पढ़ाने-लिखाने में जो तेरह-बाइस है उसकी निन्दा नहीं होगी तो क्या स्तुति होगी ?'

'तो इस साल भी अधिकारियों का कान भर कर करा दो खून दो-चार जनों का ?' तिवारी ने खीझ कर कहा।

'मेरे हाथ में गोली बन्दूक नहीं है दोस्त !...मगर सुना है कि लगन पत्री आपकी भी चल चुकी है।'

'देख लेंगे।' तिवारी ने कहा और चल दिया।

दूसरे दिन पुस्तकालय-भवन में शर्मा मिले। चर्चा चली तो तिवारी को मालूम हुआ कि इस वर्ष वोट का जमाना है। हवा बनानी है। अतः अप्रशिक्षित अध्यापकों को भी नोटिस नहीं दी जाएगी। किसी प्रकार की भी उत्तेजना और खलबली इस समय अभीष्ट नहीं है। अध्यापकों से काम भी लेना है। पार्टी है तो स्कूल है। पार्टी के पाए पर ही तो यह स्कूल का पुल टिका है। तिवारी को इस वर्ष निश्चिंत रहना है।

'परन्तु मैं तो भाई साहब इस क्षेत्र का निवासी नहीं हूं।' तिवारी ने कहा, 'फिर कैसे वोट में काम आ सकता हूं ?'

'इससे क्या ? शर्मा ने कहा, 'पांच-छः वर्ष से काम कर रहे हो। क्या सौ-पचास वोट नहीं बिगाड़-बना सकते हो ! और भी कई बातें हैं। दो महीने का वेतन बचाने के लिए भला कौन अमूल्य वोट खराब करेगा ?'

'इसकी क्या गारण्टी कि मैं वोट खराब करूंगा ? मियां की दौड़ मस्जिद तक। पुनः यहीं तो हर साल नोटिस के बाद भी शरण लेता हूं ?' तिवारी ने कहा।

'तो इसकी भी क्या गारण्टी कि तुम यहां आओगे ही ? अरे भाई, नोटिस के चक्कर में मत पड़ो। ऊपर का हुक्म है कि नोटिस न दी जाय। वह युग बीत गया। कलेजा कांप जाता है। सरकार अब अध्यापकों की पीठ पर है। हां...आं...आं। समझे ?' शर्मा ने समझाया।

'मगर, शर्मा जी ! इस प्रकार का आदेश तो गत वर्ष भी था शायद और अन्त में हम दो व्यक्तियों के सिर पर कलम-कुठारी फेर दी गई।'

'उसमें एक भेद की बात थी।'

'सो क्या ?'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

'यही कि जुलाई में रख लिए जाने के लोभ से पिछले चार महीने का बाकी रुपया छोड़ दोगे !'

'अच्छा ! यह बात रही !' तिवारी ने कहा।

'और क्या ?' शर्मा जी ने कहा।

तिवारी शर्मा के पास सरक गया और बोला—'तब क्या इस वर्ष यह नहीं सोचा जा सकता है कि यदि नोटिस दे दी जाय तो जुलाई में जगह पाने के लोभ से छह महीने का वेतन छोड़ देंगे ? गत वर्ष तो चार ही महीने का बाकी था। इस वर्ष तो छह महीने का बाकी है।···हाय रे अध्यापक ! हाय रे तुम्हारा चरित्र बल !! हाय री प्रबन्धकों की नैतिकता !!!'

'देखो, हाय-हाय मत करो !' शर्मा ने कहा—'वोट का जमाना है। जय-जय करो। हाय-हाय से काम बिगड़ेगा और जय-जयकार से बनेगा।'

'···और शर्मा जी, एक बात और समझ में आती है। इसलिए भी तो नोटिस दी जा सकती है कि पुनः शरण पाने की आशा में, पुनः नियुक्ति के चक्कर में महीने भर पार्टी का प्रोग्राम···हाथ में लेकर फांदते फिरेंगे ?'

'देखो, तिवारी ! तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है। तुम्हें सारा संसार इस समय नोटिसमय ही दिखाई देता है। मान लो कि तुम्हें नोटिस मय ही दिखाई देता है। मान लो कि तुम्हें नोटिस दे दी गयी है। अच्छा भाई, राम ! राम ! स्कूल को सलाम करो। जाओ क्या कोई और स्कूल नहीं है ?'

'कहां है ? कहां जगह है ? कौन पूछता है ? एक बुलावे दस धावे !' तिवारी ने बनावटी त्रास प्रकट करते हुए कहा।

'तो क्या और कोई काम नहीं ?' शर्मा ने कहा।

'है जरूर।' तिवारी ने कहा, 'मगर तिवारी जी, जो व्यक्ति कुछ दिन अध्यापक का कार्य कर लेता है वह और किसी काम लायक रह ही नहीं जाता है। उसकी सारी शक्तियां क्षीण हो जाती हैं। उसका मनोबल समाप्त हो जाता है। उसमें उल्लास उमंग का नामोनिशान नहीं रह जाता। वह परम बेचारा अब दूसरा कौन-सा काम कहां खोजे ?'

'देखो भाई' शर्मा ने कहा, 'ये सब दिमाग खराब कर देने वाली बातें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

हैं। हम इन्हें अलग रखना चाहते हैं। ये सब कार्य टी० वी० को न्यौता देने वाले विचार हैं। हम मास्टरी करने आए हैं। मरने का विचार अभी नहीं है। जब होगा तो तुम्हें साथ रख लेंगे। इस समय जाओ। मगन रहो। नोटिस नहीं मिलेगी, यही समझकर काम करो। अगर मिल गयी तो भाई तिवारी! माया अपार है!! उसका न पार है!!!

शर्मा ठहाका मारकर हंस पड़ा। हंसी में योग देने की तिवारी ने भी निष्फल चेष्टा की। घंटा बजा। अभी पूरे दो घंटे स्कूल चलेगा। तिवारी सोच रहा था कि घड़ी तो ईश्वर ने बनायी नहीं। क्यों न कोई सुई को जल्दी-जल्दी चला दे। दर्जे में लड़के शोर मचा रहे थे। उसके दिमाग में समस्याएं चौकड़ी लगा रही थीं। शिक्षा, अनुशासन और अध्यापक का जीवन तीनों एक विन्दु पर मिल ही नहीं पा रहे थे। टाइम-टेबुल टंगा था मगर वह कागज का था। उसमें सांस नहीं थी।

नित्य की तरह उस दिन भी शाम हो गयी और अवकाश के पूर्व चिट पर लिखी एक नोटिस मिली कि कल रविवार को सब अध्यापकगण आयेंगे। कुछ पीछे का कार्य पूर्ण करना है और संभव है वेतन भी मिले।

छुट्टी का घंटा बजा। मिनट भर के भीतर दर्जे खाली हो गये। कितनी प्यारी है छुट्टी।

जितनी देर में स्कूल लड़कों से खाली हुआ उतनी ही देर में तिवारी का मस्तिष्क विचारों से भर गया।

आनन्द शंकर तिवारी सवेरे देर तक सोता रहा। भारी मुसीबत थी। यद्यपि उस दिन रविवार था तथापि समय से आधा घंटा पूर्व ही पहुंचना था। वोटर लिस्ट तैयार करनी थी। यह काम भी उन दिनों जरूरी कार्यों की सीमा में आ गया था। अध्यापक जो था! कम सिकुड़ते हैं, फैलते हैं और कभी-कभी दूसरे महकमों के काम भी कूदकर चले आते हैं। एक तो मास्टर, दूसरे गांव में स्कूल, तीसरे राजनीति का अखाड़ा। खैर वेतन मिलेगा और प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष तिवारी को नोटिस नहीं मिलेगी, उसके सम्पूर्ण वर्तमान की ये ही दो आंखें थीं। इन्हीं से वह सारी स्थिति पढ़ रहा था। कुछ कड़ुवी थी। कुछ मीठी थी। सबको आंखें मूंदकर पचाना था। वश ही क्या था? विवश था। वास्तव में वह अपने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

को जितना जानता था उतना संसार नहीं जानता था। संसार तो जानता है कि खद्दर की धोती-कमीज पहनने वाला यह अध्यापक है। पुराने गुरुओं की गद्दी का अधिकारी है। सभ्य है, समझदार है, आदर्श है…और कभी-कभी लोग अनेक काम सुपुर्द कर देते हैं। उन्हें क्या पता कि बनावटी रूप से प्रसन्न दिखाई देने वाला अध्यापक स्वयं ही कामों से दबा है और दया का पात्र है। यहीं देखिये, तिवारी के यहां दादा पहुंचे। वोले, वच्चा! तू तो मास्टर हो। बराबर बाहर-भीतर निकलते रहते हो। मेरा एक काम कर दोगे? भला इस प्रशस्ति के वाद दादा के काम से मुकरना क्या आसान था? उन्होंने दो सौ रुपया उसे थमा दिया। उनके लड़के के लिए साइकिल बनारस या पटना से लानी थी। कहा कि लड़का वड़ा हुआ। ऊंचे दर्जे में पढ़ता है। पैदल भला कैसे स्कूल जाय? तिवारी की इच्छा हुई कि कह दे, दादा! नाम कटाकर बैठा दो। खेती-बारी सिखाओ। सभी विषयों में शून्य पाने वाला साइकिल पर चढ़कर मुमताज नहीं हो जाएगा। फिर सोचा, चलो, चलने दो। जैसे होता है, होने दो। समाज को, शिक्षा को और पूरे जनजीवन को मोड़ देने की ताकत, भूख से टूटे और भाग्य फूटे अध्यापकों में नहीं है।…रुपया हाथ में लेते एक बार तिवारी कांप गया। चील के घोंसले में यह मांस कहीं अरक्षित न हो जाय। रुपया वड़ी खराब चीज है। जिसके पास कानी कौड़ी नहीं उसके चरित्र को हिलाने के लिए यह जबरदस्त आंधी है। उसे डर लगा कि कहीं इधर-उधर खर्च न हो जाय।…फिर वापस भी तो नहीं कर सकता था। भीतर मन में कहीं कोई विचार उठा, बनारस गए चार-पांच वर्ष हो गए। इतने निकट के तीर्थ और ऐतिहासिक नगर को देखने भर भी पैसे ही नहीं वच पाते। इस साइकिल की खरीदारी में यह एक सुयोग है।…और जिस समय तिवारी तैयार होकर स्कूल जा रहा था उस समय भी वह रुपया उसके पास था। उसे वड़ा अच्छा लग रहा था। दूसरों के रुपयों पर इतनी स्फूर्ति है तो अपना रुपया कितना उत्साहवर्द्धक होगा। उसे ऐसा लगा कि सौ-दो-सौ रुपया पास में रहे और वह निज का रहे तो कड़ाके की धूप में आदमी दिन भर चल सकता है। और उस पर लू का असर नहीं हो सकता। रुपया तरी पहुंचाता है।…और रुपया किस प्रकार दौड़ता है?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

नाचता है ? पढ़े-लिखे तो और नाच रहे हैं और नाचघर है स्कूल···।

'वह स्कूल पर पहुंचा । कोई नवीनता नहीं दिखाई पड़ी । हां, प्रिंसिपल साहब की चारों ओर घूम जाने वाली स्प्रिंगदार कुर्सी आज बरामदे में लगी थी। सामने था चमचमाते मेजपोश में छिपा एक छोटा सा टेबुल । ऊपर मटमैले कागजों का एक विशाल पुलिन्दा था। देखने पर अनायास समझ में आ जाता था कि वह इस पूरे क्षेत्र की वोटरलिस्ट थी। पर्ची तैयार करनी थी। आखिर दूसरा करेगा कौन ? अध्यापक भी तो देश के नागरिक हैं। कुछ कर्त्तव्य होता है न ? मगर था यह मशक्कत का काम । अध्यापक-गण को ज्ञात था कि आज बेगार में खटना है। इसीलिए छह बजकर अड़तालिस मिनट हो जाने पर भी अब तक कोई नहीं आया था। उस दिन प्रिंसिपल साहब ने भी अपेक्षाकृत कम भारी मुह बनाया था। चेहरे पर प्रसन्नता थी। हंसकर बोलते थे। स्वार्थ के सिंधु में माया की तरंगें उठती थीं।

तिवारी को भारी आश्चर्य हुआ कि आज कुशल-समाचार भी पूछा गया। यह ढिलाई क्यों ? इस दरियादिली का आधार क्या है ? हे भगवान् ! आज कौन-सी 'त्याग-तपस्या' सामने आयेगी ?

'आपको बलिया गए तो वर्षों हो गए होंगे ?' साहब ने छूटते ही पूछा। तिवारी सिहर उठा। किस मुसीबत की यह भूमिका है ! और सरासर झूठ बोल गया चट से—

'जी नहीं श्रीमान् । अभी तो पिछले रविवार को गया था।'

'ओ । कोई बात नहीं ।' साहब ने कहा, 'फिर घूम आयें। एक छोटा-सा काम है। बहुत मामूली काम है। कोई कठिनाई नहीं है।' उन्होंने 'हरिया ! हरिया ! !' चपरासी को बुलाया।

कुछ देर तक तो वह वैसे ही साहब के टेबुल के पास हतबुद्धि-सा खड़ा रहा, परन्तु अन्त में पास में पड़ी एक बेंच पर बैठ गया। यद्यपि अभ्यास हो गया था तथापि उसे उस दिन न जाने क्यों ऐसा लगा कि इस कीमती कुर्सी और बेंच में समन्वय नहीं हो रहा है।

हरिया द्वारा जो कागज मंगाया वह अब तिवारी के हाथ पर था। बहुत समझने का प्रयत्न किया कि यह क्या है परन्तु वहं उसकी समझ के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

वाहर का सिद्ध हुआ। साहव वोले—

'क्या देख रहे हैं ? कोयले की विल्टी है। स्टेशन पर एक वैगन कोयला गिरा है। बस, गाड़ी तय कर लदवा लाना है। सब काम कुली मजदूर कर देंगे। आपको खड़ा भर रहना है। थोड़ा कष्ट तो होगा परन्तु क्या किया जाय। दूसरा करेगा कौन ? ठीक है न ?'

अव यह आखिरवाला जो प्रश्न था इसका सिवा इसके कि 'हां ठीक है' दूसरा उत्तर क्या हो सकता था ? अगर-मगर वेकार था। नौकरी का मामला था। नाजुक घड़ी थी। साहव ने पुनः कहा—

'आज और कल आपकी छुट्टी रही···और हां, वाजार जाने का तो आपको मौका मिलेगा ही। एक वढ़िया सुराही और दो ढोली पान लेते आइएगा। वलिया में सब्जियां काफी वढ़िया मिलती हैं। गरमी का दिन है। आजकल हरी सब्जियां मिले तो खूब सेवन करना चाहिए। आप अपने लिए कुछ लेंगे ही। देखिए, मेरे लिए भी चार-पांच सेर ले लीजिएगा। और ये पांच रुपया आपके व्यय के लिए। मेरा ख्याल है, कम नहीं होंगे।'

अव फिर यह आखिरवाला वाक्य ऐसा था जिसका नकारात्मक प्रत्युत्तर हो तो सकता था परन्तु उसे व्यक्त करते कठिनाई थी। अतः विना हिसाव लगाए तिवारी ने मौनकर स्वीकारवाली निशानी जाहिर कर दी। वास्तव में वह कहना तो चाहता था यह कि महाराज, हरीतरकारियां कहां हमें नसीव होती हैं। दर्जे में लड़कों को पढ़ाने भर के लिए ये वातें काम में आती हैं। अपने जीवन में तो खाने-पीने का ऐसा हिसाव है कि सुनकर डाक्टरी के सारे कानून स्तब्ध हो जायेंगे और लोग पूछेंगे कि 'तव कैसे जीते हो ?' उत्तर भी इसका है कि यह हिन्दुस्तान की हवा है, जहां लोग गम खाकर और आंसू पीकर भी जीते हैं। तमाम विटामिन मुसीवतों में मिलते हैं। प्रोटीन आदि जीवन में धारण कराने वाले आवश्यक तत्व भय, त्रास और गुलामी के बोझ से छनकर आ जाते हैं। अध्यापकों के आहार की कमी तो सब्ज वागों से पूरी हो जाती है जैसे उसका अस्तित्व ही नहीं, और मनोविज्ञान के सिद्धान्त के अनुसार तव उसका कोई कुप्रभाव अध्यापक पर नहीं पड़ता है। यदि पड़ता भी है, जैसा कि उनके मनहूस, गिरे और वेचारे जैसी सूरतों से झलकता है, तो कोई वात नहीं। वे त्यागी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

हैं। वे तपस्वी हैं। गुरु हैं। दधीचि ने दूसरों को उगाने के लिए अपनी हड्डी की खाद बना दी। क्या हुआ जो अध्यापकों का वेतन न देकर उसी रुपये से कोयला आ रहा है।...और शायद यह पहली बार नहीं आ रहा है। कई बार आया। मगर भट्ठा एक बार भी नहीं लगा। सारा कोयला चोरबाजार में चला गया। गहरा लाभ हुआ। यानी एक के कष्ट से दूसरे को लाभ हो रहा है। यही तो आदर्श है। परार्थ में प्राणों की बाजी लगा दी जाती है। इतना ही किया तो क्या किया ! यह कष्ट-सहन और तपस्या पढ़े-लिखे समझदार लोग नहीं करेंगे तो कौन करेगा ? और आजकल अध्यापक ही तो देश के सभ्य और समझदार हैं। यह तो व्यवस्थापकों की कृपा है कि उनके न चाहने पर भी उनसे त्याग-तपस्या कराकर उनका परलोक बना रहे हैं।

पहले दिन काम नहीं हुआ। साहब द्वारा दिए गए रुपयों में से तीन उड़ गए। कड़ी धूप के कारण सारे दिन वह स्टेशन के मुसाफिरखाने में पड़ा रहा। शाम हुई तो शहर में निकला। अचानक आवश्यकताओं की फौज ने उसके ऊपर हमला कर दिया। अभाव अब भुलाये नहीं जा सके। बाजार ने उसको विचलित कर दिया। शायद ही सामने से कोई ऐसी दूकान गुजरती जहां पर कुछ ऐसा सामान उसकी आंखों पर न चढ़ता जिसके लिए वर्षों से मन में मनसूबे न बांधे जाते रहे और बार-बार जेब खाली होने के कारण न शहर में जाने पर न खरीदने के बहाने आविष्कृत किए जाते रहे। अब तो स्थिति यह थी कि शहर में वह आ गया था और खाली हाथ भी अपने को कैसे समझे ? भले ही उसके पास का रुपया दूसरे का था। शहर से घर खाली हाथ जाना अटपटा लगने लगा। अब वे सामान तो उसे लेने ही हैं जो अत्यावश्यक है। बरातों और निमन्त्रणों के दिन आए। दस बारह भले आदमियों के बीच निकलने लायक धोती-कमीज तो चाहिए ही। महीनों से कपड़ों की मांग है। गमछा और चादर एकदम फट गए हैं। यह स्टेशनरी की दूकान है। फाउण्टेनपेन की स्याही समाप्त है। एक ब्लेड से बीस बार दाढ़ी रगड़ी जा चुकी है। यह काठ की दूकान है। खड़ाऊं महीनों से टूटा है। एक छोटी चट्टी के लिए महीनों से बच्ची का तकाजा है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

वह एकदम घबरा उठा। क्या लें और क्या नहीं ? फिर, यदि वेतन नहीं मिला तो क्या होगा ? यदि पास के ये रुपये जो साइकिल खरीदने के लिए दादा की धरोहर है खर्च हो जाते हैं तो इनकी पूर्ति कैसे होगी ?··· लेकिन ऐसा कैसे हो सकता है कि छः महीने में से एक महीने का भी नहीं मिले। स्कूल बन्द होने वाला है। गर्मी की छुट्टी होगी। बाहर से रुपया आने वाला है। चुनाव का सीजन है। खबर भी है कि वेतन मिलेगा।··· उसे सब आसार भले नजर आ रहे थे। इस वर्ष व्यवस्थापक कृपालु थे। नोटिस भी नहीं मिलेगी। यदि नोटिस देना होता तो इतने कठिन काम के लिए भेजते क्यों ?

···क्या जीवन है ? मर-मरकर काम किया। छह महीने की मजदूरी बाकी है। पैसे के अभाव ने, नौकरी के त्रास ने ऐसा तोड़ दिया है कि एक महीने का मिल जाने में ही उसे भारी खुशी दिखाई पड़ती है।···छोटी-छोटी चीजों का भी अभाव है। जीवन तड़प रहा है। क्या यों ही तड़पते और कसमसाते उसका चोला बदल जाएगा।···उसने सोचा, देखो भाई, जिओ, खाओ। खानेवाला खाता है। मरनेवाला मरता है। ऋण लेकर भी घी खाने का विधान शास्त्रों में किया गया है। यह दमघोंट जिन्दगी उसे कतई पसन्द नहीं।···कहने की आवश्यकता नहीं कि रोकते-रोकते भी दादा के लिए साइकिल वाले दो सौ रुपये में से चालीस के करीब इधर-उधर के सामान खरीदने में खर्च हो गए। कुछ घंटों के लिए उसे भारी आनन्द आया और उसने एक गिलास लस्सी भी पी।

ऐसा मालूम हुआ कि दूसरे दिन भी काम नहीं होगा परन्तु उसने अपनी समझ से एक छोटे साहब की दो रुपये से पूजा कर देना शहर में टिककर खाने और परेशानी झेलने की अपेक्षा अच्छा समझा। बैलगाड़ियां ठीक हो गयीं। कोयला लादा जाने लगा। लाद-लाद कर बैलगाड़ियां रवाना होने लगीं। शाम तक काम पूरा हो गया। आखिरी बैलगाड़ी भी लाद-पाथ कर खुल गयी। कोई नई बात नहीं हुई अतिरिक्त इसके कि इन्हीं सब दिन भर की परेशानी में उसे लू लग गयी। गाड़ीवान दयालु था। उसने अपना झोल और चट्ट कोयले के ऊपर ठीक से बिछा दिया। कोयले के साथ वह भी लदा हुआ स्कूल पर चला आया। उसे दुःख था कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

प्रिंसिपल साहब का सामान आज खरीदने वाला था, नहीं खरीदा जा सका था, क्योंकि चलते समय मारे बुखार के वह बेहोश-सा सो गया था।

तिवारी रात भर बेहोश रहा। सबेरे आंखें खुली तो मालूम हुआ कि सारा संसार धांय-धांय जल रहा है और जल रहा है भट्ठी के समान उसका शरीर। नस-नस में आग भर गयी है। अंग-अंग को बड़ी निर्ममता के साथ किसी ने थूर दिया है। याद आया वह कोयला लदवाने वाला दृश्य। उसके रोंगटे खड़े हो गए। ओफ! यह सजा किसी शत्रु को भी न मिले। आग में खड़ा होकर कालिख में कूदना और गरम हवा पीकर धूल फांकना। वह क्या था? दोजख? मगर क्यों, इसके उत्तर में आंखें वन्द हो गयीं।

भुलाये रखने का प्रयत्न करते रहने पर भी और खर्च का हिसाब ठीक न बैठने पर जब वह बारम्बार मन में मंडराने लगा तो उसने अपनी कुल पूंजी निकालकर हिसाब लगाया। पता चला कि साइकिल वाले रुपये में से चौवालिस रुपये खर्च हो गए हैं। यदि एक मास का (पचास रुपया) मिला तो उसकी पूर्ति कर देने पर उसके पास शेष छह रुपये बचेंगे। इन्हीं छह रुपयों के सहारे मई जून दो महीने व्यतीत करने होंगे। तब जुलाई में पुनः उसकी नौकरी का फाटक खुल सकता है। लम्बी सांस लेकर उसने करवट बदल डाली। जिस वेतन के मिलने की राह वह उत्सुकता से देख रहा था तथा जिसकी भारी प्रतीक्षा थी उसका हिसाब-किताब समझ लेने के बाद उसे कोई उत्साह नहीं रह गया। अब एक महीने का मिलने वाला वेतन ऐसी छिद्रवाली नौका के समान लगने लगा जिनके सहारे ग्रीष्मावकाश का समुद्र पार करना था। बड़े बाबू को रजिस्टर लिए आते देखकर तिवारी की जिज्ञासा बढ़ी—

'आइए बड़े बाबू!' उसने कहा।

'कहिए, लू लग गयी?' बड़े बाबू बोले।

'क्या कहें? संयोग की बात है।'

'ठीक हो जाएगा। लीजिए हस्ताक्षर कर दीजिए।' वह रजिस्टर पर हस्ताक्षर कर रहा था और सोच रहा था कि दुनिया जीने लायक नहीं है। जिस समय उसके हाथ में एक कागज का टुकड़ा थमाकर बड़े बाबू जाने लगे उस समय उसने पूछा—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

'अरे कुछ मिलेगा भी ?'

'नहीं, रुपया अभी नहीं आया है।'

'कब तक आशा है ?'

'कहा नहीं जा सकता।'

वह नोटिस वाला कागज लेकर देर तक वह यों ही उलटता-पलटता रहा। सारे तर्क-वितर्क थककर सो गये। उसका मस्तिष्क अवसन्न हो गया। वह इस स्कूल की सेवा से मुक्त कर दिया गया। थोड़ी देर के बाद इतना पसीना हुआ कि उसका बुखार उतर गया और खोयी हुई स्फूर्ति आने लगी।

आनन्दशंकर तिवारी की उक्त कहानी सुनकर मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। हां, आकर्षक था उसका अगला कदम। उसके चेहरे पर स्वावलम्बन का तेज देखा। उसके स्वर में स्वतन्त्रता की दृढ़ता थी। मैं सोच रहा हूं कि सच ही तो कहता है कि तिवारी अध्यापक के पेशे से भाड़ झोंकना आज बेहतर है। वह ट्रेन पर सवार हुआ और ढेर-सा धुआं उगलकर गाड़ी झक-झक-झककर शान के साथ जाने लगी तो मैंने सोचा कि मित्र तिवारी के जीवन की गाड़ी भी ऐसी ही शान के साथ चल रही है। उसके शब्द मेरे कानों में गूंजने लगे···'मेरी दूकान में सदा अग्नि प्रदीप्त रहती है। समाज को पका हुआ माल देता हूं।'···इधर अपना जीवन, अध्यापक-जीवन ठीक इसके विलोम के रूप में देख रहा हूं। जीवन की आग बुझ गयी है। उत्साह ठंडा पड़ गया है।···और मैं करता क्या हूं ? कच्चे माल को और कच्चा बनाकर समाज को खोखला कर रहा हूं। समाज मुझे छल रहा है और मैं समाज की सेवा का पाखण्ड रचे हुए हूं। क्या आज शिक्षा हो पाती है ?···मुहावरे के रूप में नहीं, सत्य रूप में मैं भी भाड़ झोंकता हूं। यह मुदर्रिसी की चाकरी है, ठीक ऐसी ही और खेद की बात है कि तिवारी के समान पका माल तैयार करने में असमर्थ हूं।···आखिर में सारा परिताप यह सोचकर और घना हो जाता है कि ऐसा मैं वास्तव में हूं नहीं बल्कि बना दिया गया हूं ! किसने, क्यों ऐसा बनाया ? यह तो प्रश्न ही दूसरा है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

प्रयोगवादी शिक्षा

यदि आप किसी हायर सेकेण्डरी स्कूल में हिन्दी टीचर हैं तब तो एक प्रकार से आपकी ही बात है। दूसरों के लिए भी कम ज्ञातव्य नहीं। मेरे ऊपर तो इसका भरपूर असर है। बड़ी गंभीरतापूर्वक सोच रहा हूं।

आज सुबह लगभग सात बजे ट्रेन से उतर कर टी० एन० शर्मा के यहां पहुंचा। फर्श पर पड़ी चटाई के तीन ओर सजाकर रखी कापियों के वण्डल और वीच में वैठकर किसी काम में उलझे शर्मा जी को देखकर मुझे भारी कुतूहल हुआ।

'अरे भाई! कापियों की दूकान कब से खोल दी?' और ठीक उसी समय शर्मा ने दांत पीसते हुए कलम की नोंक एक खुली कापी के पृष्ठ के एक सिरे पर लगाकर नीचे तिरछे-तिरछे झटक दिया। कलम कुछ दूर लिखी पंक्तियों को काटती हुई लाल लकीर बनाती और उसके बाद कापी को फाड़ती निकल गयी।

'कापियों की दूकान नहीं हिन्दी-शिक्षा के दिवालियेपन की रोकड़ वहियों को सजाए हूं।' शर्मा ने फुर्ती से हस्ताक्षर के रूप में कुछ चिह्न बनाकर उस कापी को एक ओर रखते हुए उत्तर दिया।

'अर्थात्?' मैंने पूछा।

'ये मेरे सामने जांचने के लिए पड़ी सातवीं से लेकर दसवीं कक्षा के छात्रों की हिन्दी की अभ्यास-पुस्तिकाएं हैं—करीव छह-सात सौ।'

'मगर यह आप जांच रहे हैं?'

'जांचने की स्थिति कहां है? एक नया प्रयोग कर रहा हूं। ट्रेनिंग कॉलेज में बताया गया कि अध्यापक को जैसी भी स्थिति मिले उसमें युक्ति पूर्वक काम निकाल लेना चाहिए।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

'आपका मतलब मैं नहीं समझ सका !'

मतलब यह है कि यह हिन्दुस्तान है। कोड के अनुसार एक अध्यापक को प्रतिदिन चार-पांच पीरियड से अधिक न दिया जाय और होता है ठीक विलोम। सात-आठ ठोंक दिया !···केम्ब्रिज और आक्सफोर्ड में एक अध्यापक पर करीब आठ छात्र हैं और यहां इसके छह गुने से भी अधिक !'

'तो आपके इस जांचने वाले नए प्रयोग से इसका क्या सम्बन्ध है ?'

'अरे महाराज यही नहीं समझे ? यदि प्रयोग न करूं तो यह पहाड़ दो महीने में भी न हिले। एक-एक विद्वान् दर्जे में हैं कि उनकी कापियों का एक पृष्ठ अच्छी तरह जांच देने पर सिर में चक्कर आने लगे और सूरज का गोला पूरब से पश्चिम की ओर चला जाय। हम लोग कक्षा को नहीं भीड़ को पढ़ाते हैं। एक-एक कक्षा के प्रत्येक वर्ग में पचास से लेकर साठ छात्र ! एकदम हाउसफुल !!'

'तो इसका अर्थ है कि किसी प्रकार खींच-खांचकर हस्ताक्षर करके वेगार टाल देना मात्र ही आपका प्रयोग है ?'

'प्रत्यक्ष देखने में तो यही है परन्तु उन आड़ी-तिरछी रेखाओं और काटकूट की त्वरा में एक सिद्धान्त है···आप इसी कापी को देखिये। खोलते ही एक झलक में दो शब्दों पर दृष्टि गयी। एक जगह लिखा है 'इसीलिए' और ठीक नीचे सही रूप में लिखता है 'इसलिए'। दो शब्दों को रेखांकित किया और फिर पूरे को बेरहमी के साथ काट फेंका।'

'ऐसा क्यों किया आपने ?'

'इसलिए कि लड़का तेज है। सही लिखने की योग्यता है। असावधानी के कारण गलत लिख जाता है। यह काटना सिर पर चांटा की तरह लगेगा··अरे अभी देखिए एक से एक प्रयोग है। पहले जलपान कर लें।'

नौकर ने जलपान की सामग्री प्रस्तुत कर दी थी परन्तु मेरी रुचि शर्मा जी के प्रयोगों में उलझी थी। शीघ्र जलपान कर पास ही डट गया। उस समय उन्होंने एक ऐसे छात्र की कापी पर इधर-उधर लाल-लाल चटकीली रेखायें खींचना और किंचित संशोधन करना प्रारंभ किया था

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

जिसकी लिखावट अत्यन्त भद्दी, गन्दी और अशुद्ध थी। शर्मा जी ने आधे मिनट में इस कापी से निबट लिया और बोले—

'बस, इस कापी का शृंगार हो गया। खींच-खांच की चटक लालिमा में लिखावट आवृत्त हो जानी चाहिए। छात्र में हीनता की भावना नहीं आएगी। वह समझेगा कि मेरी भी कापी जांची गयी है। वैसे यह उन अनेक दुलारों में से एक है, जिसके कानों के पास आकर साक्षात् सरस्वती महारानी वर्षों तक वीणा की झंकार करें तब भी शुद्ध लिखना असम्भव ही रहेगा।'

'अच्छा यह किस दर्जे का छात्र है ? क्यों ऐसा छात्र समय और धन वरबाद करता है ?'

'पढ़ता तो है दसवीं कक्षा में, परन्तु शायद 'क' से लेकर पूरी वर्णमाला नहीं लिख सकता। पढ़ता इसलिए है कि सब लड़के पढ़ते हैं अथवा शादी में पढ़ाई सहायक होगी। वैसे उसे देखो तो कापी से कोई मेल नहीं। पॉलिश किया बूट, लोहा किया बुशर्ट, संवारे गए बाल और पूरा दिव्य रूप ! सुबह ही सुबह उठकर दरवाजे पर झुण्ड के झुण्ड बैल देखता है। छा गए हैं सारे बैल दिमाग पर।'

'और, क्या ऐसे-ऐसे भी पास हो जाते हैं ? चान्स की बात है। पास नहीं होते तो वोर्ड का परीक्षाफल चालीस प्रतिशत के लगभग कैसे होता ? अच्छा देखिए यह पास होने वाला लड़का है।'

शर्मा जी ने एक कापी खोली। वाक्य का पहला शब्द गलत ! 'निचे' लिखा था। ज्ञात हुआ कि यह शब्द दर्जा 6 से ही बनवाया जाता है परन्तु दसवीं कक्षा तक जाते-जाते भी गलत होता ही जाता है ! शोध चलने लगा। प्रत्येक वाक्य गलत। हर पंक्ति में दो-तीन शब्दों की गलती। इकार-उकार का मानो बिल्कुल ही ज्ञान नहीं, 'सुन्दर' का 'सुन्द्र', 'मुश्किल' को 'मुस्कील', 'भाषण' को 'भाखड़'। इसी प्रकार एक पृष्ठ में लगभग पचास त्रुटियां। कापी लाल हो गयी। वाक्यों की त्रुटियों के लिए काट देने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं अथवा पूरी बात फिर से लिखी जाय।

'देखा ? ये हजरत जरूर पास हो जाने वालों में से एक हैं ! यह है हाई-स्कूल की हिन्दी।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

'इसका कारण क्या है शर्मा जी।'

'पूछो, दिल्ली में सम्मेलन कर अंग्रेजी के लिए नित्य हाय-हाय करने वाले मोटे-मोटे लोगों से। अजी अंग्रेजी दिल्ली की यह काली छाया प्रेतनी की तरह हिन्दी को खाती चली जा रही है। नीचे से हिन्दी टूटती चली जा रही है। ऊपर स्वार्थियों की पौ-बारह है।···यह देखिए, प्रथम श्रेणी में आने वाला लड़का है लिखता है कि 'कृष्ण कहे थे—'

'शर्मा जी, इसकी दो-चार गलतियों को ही काटकर आपने चलता कर दिया।'

'तो पूरा जांचता हूं किसका ? अधिक काटने से हीनता की भावना आएगी। कुछ को काट दिया। गलतियां बनाएगा। सही लिखने की आदत आएगी और प्रवाह में हिन्दी आ जाएगी। यही न प्रयोग है ?'

'लेकिन आप तो सिर्फ काट देते हैं। गलतियों को शुद्ध करके बना नहीं देते हैं।' शर्मा जी की रफ्तार तूफान मेल की रफ्तार हो गयी। हाथ में कापी आयी नहीं कि उलटकर काट-कूट कर किनारे किया। बोले—

'आप समझते हैं यों ही काट-कूट रहा हूं। अजी महाराज अभ्यास हो गया है। आंखें केवल गलतियों पर ही तो गड़ती हैं।···रही बात सुधार की तो एक तो समय की कमी है ? दूसरे उन्हें शुद्ध मनोवैज्ञानिक पद्धति पर स्वावलम्बन की सीख दे रहा हूं। अपनी त्रुटि स्वयं प्रयत्न करके समझें और सुधारें।'

'···अरे···रे···रे···रे···इसकी तो पूरी-पूरी लिखावट को आपने दोनों ओर से क्रास कर दिया। सब गलत है ?'

'नहीं·· यह देखिए लिखता हूं। 'महा गन्दा है', 'लिखना सुधारो'··· गलतियों की क्या बात। कुछ अच्छा लिखता है और अच्छ लिखेगा तो शायद लिखना देखकर ही कुछ नम्बर पा जाय।'

'क्या ऐसा भी होता है ?'

'पचहत्तर प्रतिशत। आप क्या समझते हैं ? कापियां जांचने पर कोई पास होगा ? अजी यहां तो परीक्षा की कापियां उठायीं, देखा कि कुछ लिखा है, प्रश्न और उत्तर की कुछ झलक मिली। मिलावट कुछ साफ है। बस कुछ नम्बर देकर चलता किया। जैसी शिक्षा वैसी परीक्षा। एक तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

करेला दूजे नीम चढ़ा।···शिक्षा तो बस एक ही विषय की होती है। वह विषय है अंग्रेजी। देखो, जहां हिन्दी के लिए एक पीरिएड वहां अंग्रेजी के लिए दो। छात्र एड़ी-चोटी का पसीना एक करते हैं इस नयाब सौदे के लिए, पर हाय···।'

'अच्छा? यह कौन-सा प्रयोग है? आपने पूरे पृष्ठ पर अण्डे की शकल बनाकर रख दी। क्या इसे यह बड़ा-सा 'शून्य' नम्बर के रूप में दिया है?' 'देखिए, यह हिन्दी-शिक्षण का शुद्ध मनोवैज्ञानिक प्रयोग है। इस शून्य को छात्र देखे तो कुछ और समझेगा। अभिभावक देखेगा तो कुछ और ही अर्थ निकालेगा। यदि स्कूल के प्रधान की दृष्टि इस गोले पर पड़ी तो उसकी दृष्टि में इसका तात्पर्य कुछ और होगा और यदि किसी सरकारी स्कूल अधिकारी की नजर में यह अण्डे की शकल आयी तो वहां इसका मतलब सबसे भिन्न होगा। अब इसके पहले कि मैं सारे तात्पर्य आपको समझाऊं यह भी ध्यान रखना है कि तैयार होकर अब स्कूल जाने का समय हो गया।'

शर्मा जी की प्रयोग-चर्चा ने मुझे स्तब्ध कर दिया। मुझे आने वाले अगले दशक दिखलायी पड़ने लगे जिसमें हिन्दी-शिक्षा की कुल वर्तमान उपलब्धियों का अण्डा पूरे विकास के साथ फूटेगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

गुदड़ी में

'गुदड़ी में लाल' यह एक मुहावरा नहीं बल्कि तथ्य है। ये कागज के टुकड़े जो मेरे सामने हैं बाजार से मसाला बांध कर आए हैं। मसाले को बर्तन में रखने के बाद ये कागज रद्दी खाने में फेंक दिए गए। आज शिवरात्रि के दिन सफाई करते समय अचानक दृष्टि एक कागज पर पड़ी। 'काश ! कि कि अलादीन का चिराग मेरे पास होता।' यह एक वाक्य था जिसने पूरा पढ़ने के लिए मजबूर कर दिया। सांस रोक कर पढ़ गया। दूसरे कागज को उठाया। ओह ! क्या गजब के उच्छ्वास है। तीसरा-चौथा सब कागज उठा लाया हूं। वास्तव में ये सब डायरी के पन्ने हैं। पृष्ठ संख्या मौजूद है। तिथियां भी हैं। मसाला रखने के कारण कागज कहीं-कहीं कट गए हैं। सिकुड़न ठीक कर सबको पढ़ने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि यह किसी अध्यापक की ही डायरी है। यही कारण है कि मैं इसे बहुत अधिक मूल्यवान मान रहा हूं। मुझे इसके लेखक से बड़ी सहानुभुति है और इन पन्नों को जीवित करने के लिए अपनी डायरी पर अक्षरशः उतार रहा हूं। (हां एक निवेदन है कि जिस अध्यापक महोदय की डायरी के ये पन्ने हैं वे कृपया धीरे से मुझे सूचना दे देंगे तो अभारी रहूंगा)।

···सोचता हूं पर सोचने का अन्त नहीं होता। कठिनाइयों से लड़ता हूं, पर लड़ाई का अन्त नहीं होता। आज पूरी उम्मीद थी कि वेतन मिलेगा, परन्तु जब संध्या समय तक कोई चर्चा नहीं चली तो मन ही मन हिसाब लगाया। जून, जुलाई, अगस्त, सितम्बर और अक्तूबर ! पूरे पांच महीने ! यह सब क्या है ? यह सब कैसे हो रहा है ? बेमिसाल ! एकदम बेमिसाल ? संसार के इतिहास में बड़े-बड़े अत्याचारों की कहानियां पढ़ीं,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

परन्तु ऐसा सभ्य अत्याचार आंखों के सामने नहीं आया। यह उस देश की बात है जिसे स्वराज्य मिला है। जहां प्रजा का राज्य है। जहां के कर्णधार अहिंसा के पुजारी हैं। मानवता की दुहाइयों से जहां के अखबारों के कालम रंगे रहते हैं। जहां शिक्षा का एक अलग विभाग है और जिसकी देख-रेख के लिए मंत्री, उपमंत्री, डाइरेक्टर, इन्स्पेक्टर और अगणित अधिकारियों की एक विशाल फौज है। लम्बी-लम्बी तनखाह! विपुल वैभव!! अखण्ड रोव!!! मैं ललकार कर कहता हूं कि अगर सरकार ईमानदार है तो उसकी ईमानदारी को चुनौती है। वह देखे कि नीचे यह क्या हो रहा है? अन्यथा वड़े-वड़े पद, वड़ी-बड़ी वातें, सूजी हुई देवता-सी सूरतें और लम्बे-चौड़े भाषण सव पर लानत है। धिक्कार है!!···काश, कि अलादीन का चिराग मेरे पास होता और इच्छित वस्तु पलक मारते ही उपस्थित हो जाती, परन्तु ऐसा कहा है? मेरे मन कुछ और है, विधान के मन और। सोचता हूं कि यह भी अच्छा है कि इच्छाओं के पीछे और सूरत के पीछे दौड़ने वाला यह मन तो है जिसमें दुनिया भर के 'अभाव' आकर भरे हुए हैं। असम्भव से असम्भव आशाएं भरी पड़ी हैं। अतृप्ति की ज्वाला जल रही है। विवशता की लपटें निकल रही हैं। हाय आंधी बनकर चल रही है। जव आशा नहीं रह जाती तो रूपवती इच्छाओं का जौहर हो जाता है। दिन के चौबीस घंटे में यह चिता न जाने कितनी वार सजायी जाती है और न जाने कितनी वार हृदय की कोमलतम भावनाएं उसमें हुनी जाती हैं। यह कैसी आग है जो बुझती नहीं!

···कल्पना जगत में लाखों का वारा-न्यारा करने वाला मैं आज पैसे-पैसे का मुहताज हूं। छोटी-छोटी इच्छाओं की भी वलि चढ़ जाती है। प्रमाण चाहते हैं? लीजिए। मगर, वैसे नहीं। देखिए, दिन में दो-चार वार अवश्य लखपती वन जाता हूं। मेरे नाम से कोई अज्ञात व्यक्ति दस-वीस-पचास लाख या करोड़ का खाता जरूर खोल देते हैं। दैवी सेवक चट इच्छाओं के खाके को रंगीन वना देते हैं। सुदामा के भवन से भी शीघ्र मेरा महल तैयार हो जाता है। मेरा खंडहर खयालों के फूलों से जगमगाने लगता है। अरे, मैं क्या हो गया? क्षणभर तक स्वयं ही स्वयं को देखकर दांतों तले उंगली दवा लेता हूं, किन्तु वुरा हो उस वेतन का जिसकी याद

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

आते ही सारा महल एक क्षण में ही चकनाचूर हो जाता है।···एक मामूली मास्टर जिसे सिद्धान्त रूप से वशिष्ठ-विश्वामित्र की गद्दी मिली है, व्यवहार रूप से निम्नतर श्रेणी के मजदूर की स्थिति प्राप्त है और यथार्थ रूप में जो दिल, फटे दिमाग और फटे जीवन वाला एक अभागा है।

···आज गांव में सभा हुई। प्रमोद बाबू ने बड़े जोरदार शब्दों में यह प्रस्ताव रखा कि हमारे गांव में भी एक हाई-स्कूल खुलना चाहिए। प्रस्ताव की भाषा बड़ी जोरदार थी। बड़ा मोहक प्रस्ताव था भला कौन विरोध करता? सबने एक स्वर से कहा—बहुत अच्छी बात है प्रमोद बाबू ने कहा—जिन्हें इसके विरोध में कुछ कहना हो वे हाथ उठाएं। आंख धरती पर गड़ाए हाथ उठा दिया। लोग भुनभुनाने लगे। आंखें उठायीं तो देखा एक और हाथ उठा है। मुझे बोलने के लिए कहा गया। क्या बोलता, बड़ी वेदना थी। थोड़े शब्दों में कह डाला—भाइयों, मैं नहीं चाहता कि रात-दिन हाय-हाय कर मरने वालों अभागों की एक नयी टुकड़ी इस गांव में आ बसे। लोगों ने इसे स्पष्ट करने के लिए कहा। कुछ ने बहस करने की उत्सुकता प्रकट की। मैंने कहा, सब बेकार है। समय बहस का नहीं, अनुभव करने का है। ज्यों-ज्यों आप तथ्यों की गहराई में उतरेंगे मामला खुलता जाएगा। दूसरे सज्जन खड़े हुए। पुराने ढंग के रईस हैं। बोले—'स्कूल खुलने से समझदारों की संख्या बढ़ जाएगी। ये समझदार ऐसे होंगे कि न लाज, न डर, न सभ्यता, न सम्मान और न शील और चौबीस घण्टा सिर पर सवार! ना, सज्जनों यह सिरदर्द जानबूझ कर कौन मोल ले। गोली मारो स्कूल को। लड़के पढ़-लिखकर अवारा हो जाते हैं।'

···ब्रह्मचारी जी ने सिर उठाकर, चेहरे को खींचकर और आंखें खूब बड़ी-बड़ी बनाकर कहा—'अरे इस छठे महीने में भी मिलने का ठिकाना नहीं? क्या खाते हो? कैसे जीते हो? कैसे रहते हो? कैसे काम करते हो? क्या पढ़ते हो? किस तरह तुम्हारा मस्तिष्क काम करता है? दर्जे में कैसे विषयों के साथ एकाग्रता होती है? बालकों का क्या होता? शिक्षा कैसे हो पाती है? कैसे उनका निर्माण होता है? तुम्हारे जैसे तन-मन-धन का मरियल मास्टर कैसे उनको शारीरिक-मानसिक दृष्टि से पुष्ट कर पाता है? स्वयं भूखे तुम कैसे बच्चों को संतुष्ट कर पाते हो? क्या उनका चरित्र-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

निर्माण हो पाता है ? क्या ऐसे ही भारत के भावी कर्णधारों का निर्माण होगा ? क्या तुम रात-दिन अपनी मजबूरियों में मरते रहते शिक्षा का दायित्व संभाल लेते हो ? अरे, मैं अन्त में पूछता हूं कि क्या शिक्षा हो पाती है ?'

ब्रह्मचारी जी की इस लम्बी प्रश्नावली का मैं क्या उत्तर देता ? सारे सवालों को समेटकर एक वाक्य में उन्हें उत्तर दे दिया—'काम चल जाता है।'

···आज मैंने एक कविता लिखी है। कविता पहले बराबर लिखा करता था, परन्तु जब से सारा जीवन ही कविता हो गया तब से कागज पर उतारते डर लगता है। अब तो मेरा जीवन ऐसा है कि दूसरे मुझे—मेरी करुण दशा को—देख-देखकर कविता लिखें। खैर, वह कविता ऐसे है—

'जीवन वसन्त में है कैसा यह वज्रपात
अटवी के सारे दल सूख गिरने लगे
वज्र का तो घोष नहीं पतझर जैसा यह
कौन आया चुपके से। एक दिन मैंने ही
बुलाया उसे था खोदकर निज जड़ को
क्या जिसे हम चाहते हैं मन से बहुत ही
वह अलभ्य होती सदा आती नहीं हाथ में
जान पड़ता है यही, अन्यथा विपत्ति यह
झेलनी ही पड़ती क्यों मरना क्यों पड़ता ?

···खुशियों का अन्त नहीं। दर्द का हद से गुजर जाना ही है दवा हो जाना। क्या ही अमोल शिक्षाएं थीं ? कृतार्थ हो गया।···जो पुण्य पोखरा खोदवाने में होता है, जो पुण्य सदाव्रत चलाने में होता है, जो पुण्य सड़क पर पेड़ लगाने में होता है, जो पुण्य तीर्थ स्थान में दान करने से होता है और जो पुण्य एक हजार एकादशी व्रत करने से होता है वही पुण्य बालकों को विद्या दान करने का होता है। आप लोग···।'

(इसके बाद पन्ना थोड़ा फट गया है)···धैर्य रखें। हिम्मत रखें।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

त्याग सेवा का फल मिलता है। सेवा कौन करने का अधिकारी है? जो विज्ञ है। आप लोग अध्यापक हैं। गुरु हैं। विज्ञ हैं। आपकी सेवाओं का फल पैसे से नहीं आंका जा सकता।...'

(इसके बाद पन्ना फट गया है। यहां आकर मनबोध को भारी उत्सुकता है कि शिक्षाएं ही मिलीं या एकाध महीने की कृपा भी हुई? हे भाई अज्ञात नाम मास्टर! पत्र जरूर लिखना। तुम्हें नमस्ते!)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

मास्टरों की मौज!

चार बज गए तो मुक्ति मिली। जान में जान आयी। बाहर की ठंडी हवा छू-छूकर मन खिल गया। चिड़ियों की चहक से डाह पैदा हुई। परन्तु समाधान भी मिल गया। ऐसा लगा कि वास्तव में हम दिन भर चिल्लाते हैं। चहकने और चिल्लाने में आसमान और जमीन का अन्तर है। निय-मित कक्षा और स्वच्छन्द शून्य में कोई समता नहीं। पढ़ाना मेरा 'काम' है और चहकना इनका 'खेल' है। शायद किसी शासन में कभी वह दिन भी आए जब अध्यापन 'नौकरी' का निकृष्ट 'काम मात्र' न रह जाय और खेल की ताज़गी से अध्यापक सदा खिले रहें। आज तो बस कोरी थकावट है। नभ-चारियों की-सी स्वरों की सजावट यहां कहां? भीतर मन मन्द और बाहर तन एकदम निस्पन्द! मशीन की तरह पग उठते हैं—धीरे-धीरे, निरे निराश ज़िन्दगी को नापने के पैमाने की तरह। इच्छा होती है कोई हमसे कुछ न बोले। मैं किसी से कुछ न बोलूं। बस, मैं रहूं, सड़क रहे, उठते कदम हों और सोए मन के थके सारे चित्र हों। शेष कुछ नहीं।

तभी बादल घड़घड़ाए। आंखें उठाईं तो काजल की तरावट पुतलियों पर छा गयी। आसमान को घेर-घेरकर छाए नए-नए जलधर और उनकी यह दैवी भाषा! मन को भी एक तृप्ति मिली। फूली हुई श्यामल तूल-राशि के ढेर, एक पर एक, ढकेलते, ढुलकते, धकियाते, धाए हुए कहां से चले आ रहे हैं? आकर छा गए सिर पर। अजीब संकेत रहा उनका भी। हवा ने सांस रोक ली। सारी दुनिया ने दम साध लिया। पीपल के पत्ते अचल हो गए। सृष्टि में शान्ति छा गयी परन्तु आसमान की वह तूफानी क्रान्ति कब तक छिपी रहती?

पहली फायरिंग हुई पीपल के पत्तों पर खड़...खड़...खड़...और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

ठीक मनबोध की नाक पर एक बड़ी-सी बूंद का शीतल गोला दगा कि आसमान की बौछार से कोलाहल मच गया। बूंदों की पहली चोट से सड़क की धूल धुएं के समान उठने लगी। क्षणभर पहले के सारे सूनेपन पर पानी फिर गया। ऊंचे से उतर-उतर कर जीवन पग-पग पर बहने, बटुरने और फैलने लगा। सड़क छोड़कर सिर गड़ाए उछलता-कूदता जो पास के खेत-रखवाले की झोपड़ी में जा धंसा तो पता नहीं किधर से उछल कर हमसे पहले सियाराम जी ने ही अपना शरीर झोपड़ी में रख दिया।

'यह भी एक आसमानी इन्तजाम रहा।'

'क्यों नहीं आम और मछली की मुलाकात भला ऐसे क्यों होने लगी ?'—और इस संक्षिप्त बात-चीत के बाद दोनों ने भीगे कपड़े उतार कर एक ओर रख दिए। टोपी और चश्मे भी।

धूंआधार जल वर्षा ! धान के खेत की मिट्टी मानो चांदी से मढ़ गयी। धान के पौधे सजल-स्वर्णलता जैसे लहरा उठे ! झोंपड़ी के चारों ओर पानी खल···खल···खल···करके बहने लगा। अंधेरा-सा छा गया। वर्षा के पेट में झोपड़ी और झोपड़ी के पेट में दो इन्सान। सियाराम जी को मूड़ आ गया—'दिनकर' की पंक्तियां उठाईं—

'तुम्हारी भरी सृष्टि के बीच,
एक क्या गरल मात्र ही पेय ?
सुधा मधु का अक्षय भंडार
एक मेरे ही हेतु अदेय ?'

ओफ, यह क्यों मल्हार की वेला में दीपक राग सजाने चले ? क्या यह ठंडी हवा तुम्हें गुदगुदाती नहीं है ? सहलाती नहीं है ?' मैंने कहा।

'बिल्कुल नहीं। पत्थर हो गया हूं। जीवन जहर हो गया है और वर्तमान पूरा कहर।'

सियाराम के उत्तर ने एक क्षण के लिए चुप कर दिया। उसके अभाव की गहराई को उसके शब्दों से नापने लगा। ऐसा प्रतीत हुआ कि दैनिक जीवन की मुख्य चिन्ताधारा का प्रतिनिधित्व कविताएं अथवा उनकी पंक्तियां भी करती हैं। किस दिन, किस सुख-दुख की, किस उमंग में, कौन व्यक्ति 'मानस' की चौपाइयों को गुनगुनाता रहा और किस सप्ताह में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

कौन 'आंसू' के किस पद को कण्ठ-हार बनाए रहा, सब याद करके विचारने पर दांतों तले उंगली दबा लेनी पड़ती है। ये भीतर की हलचल के प्रतीक और सुख-दुख की सच्ची तस्वीरें सान्त्वना-सी, समझौता-सी स्वरों पर चढ़ी लहराती रहती हैं।

'इस मधु वर्षा के बीच कहां गरल की धारा का दर्शन कर रहे हो सियाराम भाई ?'

'अपने गांव में।'

'तो क्या तुम इस समय यहां नहीं हो ?'

'नहीं।'

'तुम कहां हो ?'

'बताया न, अपने गांव में।'

'और इस झोपड़ी में ?'

'केवल शरीर भर है।

'तो शरीर के चारों ओर तो बहार है, वर्षा है, हरियाली है, अपने मन को किन वस्तुओं से घेर रखा है ?'

'तूफान से, प्रलय से, विनाश से।'

'अर्थात् ?'

'साक्षात् काल की तरह मुंह बाए आसमान निगलने के लिए गर्जन कर रहा है। हरहराती झाड़ियों के तीरों ने कलेजे को छलनी कर दिया। रह-रहकर दीवारें गिरती हैं और मन दब-दबकर मर-मर जाता है। किसका नाम बताऊं कि जिसने पानी रोककर मुहल्ले को तालाब-सा बना दिया है। पूरा भेड़िया है। भेड़ें मरती हैं, मरा करें, चिन्ता किसे है ? पक्की हवेली में उधर वर्षा मंगल है, इधर सारी सुधा-धारा गरल-धारा…।'

'बस करो भाई। नरक की कहानी सुनने का विचार इस समय बिल्कुल नहीं है। थककर चूर था। वर्षा ने ताजगी दी। थोड़ी देर वर्तमान का सुख भोग लेने दो।'

'यह भी आसमानी इन्तजाम ही समझो। तुम वर्तमान में खिल उठो और मैं भूत में मुरझा जाऊं।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

'एक बात कहूं ? मानोगे ?'

'कहो। मानूंगा।'

'देखो, गांव, गांव के भीतर नहीं बाहर है। तुम गांव की गली मत देखो, खेत देखो। वहां का कीचड़ मत देखो, हरियाली देखो। ढहते घर नहीं, बाहर जमी कबड्डी की शान देखो। एक जोता हुआ बड़ा-खेत अखाड़ा हो गया है। जवान निकल पड़े हैं। जवानी का जोश है। किल-कारी, ललकार और जय-जयकार से दिशाएं गूंज रहीं हैं। धर-पकड़, उठा-पटक, भाग-दौड़, बाजी, झपट्टा, बचाव और पूरे सरकस का समा ! खुशी-खुशी का कठिन खेल और पूरा मेल ! न गली, न गरीब ! धन्य हो नाग-पंचमी !···तुम यह देखो भाई सियाराम कि एक बार सूखी धमनियां गरमा उठें।'

'काश ! कि मैं देख पाता। अपने गांव पर मुझे पूरा गर्व था। अभी दो वर्ष पहले अजब मेल था। खाना-पीना, उठना-बैठना और सारे व्यव-हार में एक भाई चारे का लगाव था। अब तो देखते-देखते आग लग गयी। यहां रूस, अमेरिका, चीन, लाओस, कांगो, अलजीरिया और अनेक बरलिन हो गए हैं। बाहर से बातचीत होती है पर भीतर के पैंतरे अजीब हैं। चोरी में सरदारी में और रखवाली में पार्टीबन्दी। खान-पान की तो बात क्या, एक दूसरे के दरवाजे पर जाने में भी हेठी !·· मेरा गर्व चूर चूर हो गया। अब मैं क्या देखूं ? अब तो इंसान के चेहरों में जानवरों और जन्तुओं का आभास मिलने लगा है। कोई पूरा भैंसा है। निर्बाध चरता-खाता है। कोई सांप है, डस लेता है। कोई गिरगिट, कोई चूहा, कोई कुत्ता और इसी प्रकार कोई कुछ कोई कुछ। आदमी खोजता हूं। खोजते-खोजते थक गया हूं···मेरा सपना, गांव की सेवा की इच्छा, ओफ् मालूम होता है सिर फट जाएगा।'

सियाराम भाई की आंखों से टप-टप आंसू की बूंदें निकलकर अधभीगे समाचारपत्र को और भिगोने लगी। इसी समय मैंने ध्यान दिया कि दुःख के आंसू इंसान ही नहीं; झोपड़ी भी बहा रही है। ऊपर पड़ने वाला सारा पानी बाहर ही नहीं चला जाता, बहुत कुछ भीतर भी गिरता है। इसीलिए झोपड़ी के नीचे की जमीन गीली हो गयी है। घास भी जहां-तहां उग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

आयी है। वर्षा की आहट पाकर केंचुआ निकलकर रेंगने लगे हैं। चीटियों की एक भारी सेना मय अपने अण्डे के साथ झोपड़ी के खम्भे में शरण खोजने के लिए चल पड़ी है। अनेक प्रकार के कीड़े-मकोड़े रेंग रहे हैं। महा-मनहूस दृश्य है। नाम-मात्र का बचाव है। यह झोपड़ी भी गांव के पूरे प्रतीक के रूप में निकली। दुनिया में एक से एक सुन्दर भवन है, महल है। परन्तु गांव के पल्ले पड़ी यह झोपड़ी, औंधी खोपड़ी की तरह। सच ही तो कहा है गीत की पंक्तियों में कि—'सुधा-मधु का अक्षय भण्डार, एक मेरे ही हेतु अदेय ?'

मैंने एक बार पूरा जोर लगाकर फिर वातावरण बदलने का प्रयत्न किया।

'देखो सियाराम भाई, वर्तमान ही सुख है। विस्मृति ही आनन्द है। हम लोग क्या क्षणभर के लिए भी उस अप्रिय को भूल नहीं सकते।··· सोचो तो, हम लोग मास्टर हैं। दूसरों को पढ़ाते हैं। ज्ञान की गठरी खोलते हैं। स्वयं भी कुछ सीखें तो क्या हर्ज ?'

'संसार सड़ गया है। यहां सीखने लायक एक ही चीज है वह है जल्दी मरने की कला।'

'परन्तु दुःख से नहीं, सुखपूर्वक। क्या तुम नहीं जानते हो कि हम लोग उतने ही पुराने हैं जितने पुराने ये सूरज-चांद-सितारे और स्वयं यह संसार! कितनी लम्बी यात्रा! कितनी दूर मंजिल! यह वर्तमान जीवन तो मानो समुद्र में एक बूंद की तरह! कितना क्षुद्र! फिर, ये सुख-दुख? निरे नगण्य और एक दम मूर्खता! केवल उलझानेवाले! जिसे सबसे बड़ा दुख समझते हो यानी वह मौत तो फिर नए जीवन की शुरूआत होती है।'

'तो, फिर हमें मृत समझो मनबोध! अब नए जीवन की नयी शुरूआत की प्रतीक्षा है।'

'एकदम वाजिब बात। शुभस्य शीघ्रम्। क्या हम लोग अभी उसे शुरू नहीं कर सकते ?'

'कैसे ?'

'बाहर निकलो। ये बादल बुला रहे हैं। एक-एक हाथ कबड्डी हो जाय।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

'हा···हा···हा···हा···क्या पागलपन है ? लोग इकट्ठे हो जायेंगे कि दो बूढ़े सनककर लड़ रहे हैं ! ···लेकिन मजा तो आ जाएगा। मेरी भी तबीयत फुरफुराने लगी है।'

'तो निकलो। इस खेत में एक-एक हाथ हो जाय।'

'निकलो।'

'वढ़ो आगे।'

'वढ़ो···इस खेत में तुम्हें खेल के हाथ दिखाऊं और पांछ में पछाड़कर कचूमर निकाल दूं।'

'वेकार है वहकना। धर दवाऊं तो छठी का दूध याद आ जाय। मेरी हवा को भी छू लो तो माल।'

ऐसा लगा कि कीचड़ में लथपथ, हांफ-हांफकर पर हंस-हंसकर सुध-बुध भूलकर दो अधेड़ पैंतरे पर लपक रहे हैं। वर्षा की झाड़ियों की कुछ परवा नहीं। एकान्त में उनकी ललकारें गूंज रही हैं। दोनों मौज में हैं। दोनों खूब खुश हैं।

—परन्तु शरीर हिला भी नहीं। कबड्डी सिर्फ मन खेल रहा था। थोड़ी देर में पानी थम गया तो चलने का प्रस्ताव करके सियाराम ने चुप्पी तोड़ी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

अवकाश के दिन

तीन दिन के अवकाश में ही मन ऊब गया। सोचता हूं, इससे तो अच्छे पढ़ाई के ही दिन होते हैं। सहयोगियों का साथ, छात्रों का मेला, घंटा बज रहा है, नए खून खिलखिलाहट, हलचल, कांव-कांव, किच-किच और फिर पूरी शांति, यहां से वहां कितनी नयी बातें, चहल-पहल और इन्हीं सब में दिन उड़ जाता है।

यहां दिन पहाड़ हो गया। कटता ही नहीं। किताब पर किताब उलटता हूं। चुपचाप किताबों के सागर में डूबा रहना भी अच्छा नहीं लगता। क्या करूं ? खेतों की ओर चलूं घूमूं, प्रकृति निरीक्षण हो, परन्तु इसकी भी एक सीमा है। एक सामाजिक आदमी सारा-दिन बवण्डर की तरह अकेले खेतों में घूमकर कैसे बिता सकता है ?

यहां गांव में अजब हाल है। कहीं ऐसा स्थान नहीं जहां जाकर दो घड़ी बैठूं। कोई ऐसा आदमी नहीं जिससे खुले मन से दो बातें हों। पूरी उदासी, बीहड़ सुनसान, गहरी मनहूसी और दमघोंट एकान्त ! किसान हैं, काम-धाम में ऐसे डूबे हैं कि मरने की फुरसत नहीं। फिर, इनकी बैठकें क्या हैं ? निजी कलह-कल्मष का अखाड़ा, और इसमें इनका दोष क्या ? क्या शिक्षा मिली है इन्हें ? कौन-सी संगत उपलब्ध है इन्हें ? सुन्दर और सुरुचिपूर्ण जीवनदिशा का कौन-सा साधन है इनके पास ?

राय साहब थे। वे एम० एल० ए० हो गए। अब यहां छठे-छमासे एकाध बार आ जाते हैं। जिले पर मकान लेकर अपना दरबार बना लिए हैं। यहां रहते थे, देश-विदेश की तथा अन्य बातें होती थीं। कमलेश ने गतवर्ष नौकरी पकड़ ली। भला उसे किस बात की कमी थी ? गांव के बड़े जमींदार का एकलौता बेटा ! एम० ए० पास कर एक वर्ष घर पर रहा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grar

काफी सजीवता आई इस गांव में। सभा, समिति, नाटक, अखबार और भाषण का सिलसिला सब उखड़ गया। आज वह बम्बई को आबाद किए है। विपिन रेलवे में क्लर्क हो गया। विहारी आचार्य पास कर रोज शहरों की खाक छान रहा है जैसे भाग्य के फाटक पर धक्का दे रहा है और भाग्य खुलते ही गांव का न होकर शहर का हो जाएगा।

अरे, मैं यह क्या देख रहा हूं ? कोई एक दो की बात है ? चार-छह-दस-बीस की बात है ? सभी शिक्षित और समझदार होकर गांव छोड़-कर शहरों में उड़ गए। अब लो, गांव में तो बच गए हैं कोरे किसान ! क्या मनोरंजन हो और क्या सरसता आए ?

एक दिन और इसी प्रकार ऊबकर मैं घर से निकला। सोच रहा था, गांव जीने लायक नहीं रह गए परन्तु कुछ करने के लिए जब हमें शहर भी नहीं जाना था पण्डित जी के दरवाजे पर गया। वे बैठे सुर्ती बना रहे थे। बोले—

'आइए मास्टर साहब ! कहिए क्या हाल है ?'

'सब आपकी दया है।' मैंने कहा।

'आज छुट्टी है ?'

'जी।'

'अच्छा, यह बताइए, एम० एल० ए० साहब आजकल कहां हैं ?'

'शायद लखनऊ में हैं।'

'आयेंगे नहीं ?'

'क्या काम है ?'

'क्या बताऊं ? मुकदमें में बहस हो चुकी है। फैसला सुनाने की तारीख पड़ी है। जी धक-धक कर रहा है। सोचता हूं, एम० एल० ए० साहब को लेकर एक दिन तहसीलदार साहब के यहां जाऊं।'

'वहां एम० एल० ए० साहब क्या करेंगे ?'

'यही मास्टर बने हो ? सच कहा है, मास्टरों की अक्किल लड़के चर डालते हैं ?' पण्डित जी बिगड़ गए।

अब अधिक देर बैठने के लिए वहां धैर्य शेष नहीं था। थोड़ी ही देर में वार्त्ता का उपसंहार कर पण्डितजी को प्रणाम किया और आगे बढ़ा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

सभापति जी के यहां पहुंचा। वे मौजूद नहीं थे। दो-तीन आदमी बैठे थे। एक ने बड़ी अधीरता से कहा—

'बस, अब फैसला हो जाएगा ! मास्टर साहब से पूछो।'

'मास्टर साहब क्या जानते हैं ?' दूसरे ने कहा।

'क्यों नहीं जानते हैं ?' पहले ने कहा और बिना दूसरे के उत्तर की प्रतिक्षा किए मुझसे पूछा—'मास्टर साहब, भला यह कानून बन गया है कि चकबन्दी में डांड़ मेढ़ पर अधिक जोत लिया गया खेत भी मिल जाएगा ?'

'मैं तो नहीं जानता हूं !' मैंने कहा।

'दूसरे ने जोर देकर कहा—'मैं अच्छी तरह जानता हूं कि चाहे जबरदस्ती, चाहे भूल से, चाहे धोखे से, चाहे जैसे भी किसी ने यदि किसी का एक लट्ठा, दो लट्ठा, चार लट्ठा खेत पकड़ लिया है तो वह उसका अधिवासी माना जाएगा और चकबन्दी में उतना उसे मिल जाएगा।'

पहले ने शंका प्रकट की, 'तब तो हमारे खेत में भी एक जगह तुम दो लट्ठा घुस आए हो, इस वर्ष डांड़ होगा।'

'करा लेना डांड़ ! मगर अब मैं नहीं छोड़ूंगा।'

'क्यों नहीं छोड़ोगे ? ऐसे सहस्रबाहु हुए हो ?'

'सहस्रबाहू नहीं तो क्या मैं तुम्हारा कनधरुआ हूं ? खेत पर चलना तब पता चलेगा !'

'पता तो चलता है ? जब दांव में पड़ते हो तो चें बोलने लगते हो ?' देखो अधिक बोलोगे तो यहीं पटक कर गल्ला कर दूंगा।'

बैठे हुए लोगों ने बीच-बचाव किया। मामला खतम हुआ और दोनों सज्जन एक दूसरे को धमकाते दो ओर चले गए। मैं भी चला। मन उदास हो गया। अब कहां जाऊं ? महंत जी के यहां मठिया पर गया। महंत जी आसन पर विराजमान थे। नीचे भक्तों की भीड़ थी। एक भक्त ने चिलम पर आग रखकर महंत जी को थमाया और उसी समय मैंने उनका चरण स्पर्श किया।

'नारायण ! नारायण ! कहो बच्चा, शरीर आनन्द में है न ?'

'सब आपकी कृपा है बाबा !'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

बाबा ने धीरे-धीरे धुआं निकालकर सांस को एकदम सरपट छोड़ दिया। चिलम से आग की लपट निकल पड़ी। क्षणभर धुआं रोककर बाबा ने फुफुकारते हुए धुएं को मुंह से बाहर कर दिया।

'मीठा है न बाबा ?' एक ने पूछा।

'अभी पूरे ताव पर नहीं आया है।' बाबा ने कहा और चिलम बढ़ा दी। कम्बल के आसन पर मैं बैठ गया। एक ने हमारी ओर इशारा किया जिसे इशारे से ही बता दिया कि मैं आप लोगों का साथ देने में असमर्थ हूं। चिलम खाली हुई तो फिर बोझ दी गयी। तीन चिलम पीकर बिरना-चौधरी उठे। अंगड़ाई लेते हुए बोले—

'अरे हमें तो घास अभी लानी है। काफी देर हुई।'

'आजकल क्या पूछना है ? जहां बैठे वहीं एक बोझ बांध लिया।' दूसरे ने कहा।

अच्छा तब तनिक और बैठ जा। अभी लोग खेतों की ओर होंगे। थोड़ी देर में लौट आएंगे !' तीसरे ने कहा।

'और एकान्त पाकर सारे खेत तुम लोगों के हो जाएंगे ? चोर कहीं के ? भागो यहां से ?' बाबा ने कहा, परन्तु बोली में वास्तविक फटकार नहीं थी और भक्तों को ज्ञात था कि बाबा का यह प्यार भरा स्वर है !

'तो हम लोग कहां जांय ?' चौथे ने कहा।

'देख रहे हैं न मास्टर साहब ?' महंत जी ने कहा, 'ये सब साले चोर हैं। जाकर खेत कनारेंगे। एक धूर पास में खेत नहीं माल-मवेशी खूंटे पर भेंड़ियाए हैं। ये गांव को उजार डालेंगे।'

'तो आप ही बताइए मास्टर जी', एक ने मेरी ओर मुखातिब होकर कहा—'हम लोग क्या करें ? इसी गांव में हम लोग हैं न ? कहां जांय गुजर-बसर के लिए कोई अवलम्ब चाहिए कि नहीं ?'

'हां', मैंने कहा और ऐसा लगा कि देर तक ऐसे ही हां में हां मिलाते नहीं बनेगा। महंत जी का चरण स्पर्श कर चल पड़ा।

उस दिन अपने इस गांव से बड़ी निराशा हुई क्या इसका सुधार संभव है ? क्या मैं कुछ कर सकता हूं ? पर मैं भी यहां रहता कहां हूं ?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

आज फिर यह गांव की मनहूसी काट खाने लगी। मैं अपने मित्रों को स्मरण करता हूं। विभिन्न गांव के ये सज्जन मेरे मित्र थे। इनके यहां मैं जाता था। इससे मैं प्रेरणा पाता था और कुछ सीखता था। सरलता, का आत्मीयता का, मनोरंजन का और सजीवता का एक यह कार्यक्रम था।

आज क्या हो गया ? कैसे सब बदल गया ? सोचकर भी नहीं सोच पाता हूं, कैसे क्या हो गया।

ऐसा तो नहीं है कि सब ज्यों का त्यों है, मैं ही बदल गया हूं। यह भी सम्भव है परन्तु गहराई से अपने अन्तस्तल में झांक कर देखता हूं कि वैसी ही विश्वास की, प्यार की, प्रतिष्ठा की, पावन भाव-धारा अब भी मौजूद है। अपने मित्रों के साहचर्य की मधुर स्मृतियां अब भी प्रेरित कर उनके यहां घसीट ले जाती हैं।

पर वहां पाता क्या हूं ? हमारे सभी मित्र कामकाजी हो गए। आत्मीयता का सरस समागम कहां ? वहां तो परिचय का सूखा कुशल समाचार चलता है।

तब ? यह मेरा गांव सूना ! मेरे मित्रों के गांव-गांव सूने ! मेरी श्रद्धा के तीर्थ सूने ! मेरे प्यार के किनारे सूखे ! किसान सूखे ! बाग-बगीचे सूखे ! सारा जीवन सूखा ! सबसे बढ़कर यह कि मेरे मित्र सूखे !

श्री 'क' गांव के नहीं अब कचहरी के आदमी हो गए। जब जाता हूं पता चलता है कि तारीख पर गए हैं। भेंट होती है तो दो बात भी नहीं कर पाता। मामले वाले अपना पचड़ा ले बैठते हैं। अब गांवों में 'कचहरी-सेवी एक नयी नस्ल के आदमी पैदा होने लगे। मेरा वह पुराना मित्र मानों मर गया।

श्री 'ख' घर के मालिक हो गए। पढ़ना-लिखना सब दूर छूट गया। रात-दिन के घरेलू मामलों और अर्थचक्र ने इन्हें चूस लिया। अब मिलने पर हंसने का नहीं जीवन के रुदन का स्वर सुनाई पड़ता है।

श्री 'ग' नेता हो गए। बड़े आदमी हो गए, पहाड़ पर चढ़ गए। नीचे के आदमी अब उन्हें कीट-पतंगे से लगते हैं। गांवों में मिलते भी वोट के जमाने में ही हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

श्री 'घ' पहले घघाकर मिलते थे अब देखने पर कुछ खिचे-खिचे से, कुछ कतराये से, ऊपरी मन से, घिसीघिसाई शिष्टाचार की दो बातें करते हैं। सुना है अब ये शीघ्र धनी हो जाने के लिए गांव के मूर्ख-दरिद्रों की जमीन फांसने लगे हैं।

श्री 'ङ' पहले अध्यापक थे। पवित्र, संयमित और आदर्श जीवन था। गांव-जवार के लोग उठते-बैठते अनेक सभ्य आचार की शिक्षा पाते थे। आजकल लाख-दो लाख से कम की बातें ही नहीं करते। गांव की पार्टियां, गांव के झगड़े और गांव के तिकड़म सब आज उनके यहां जमते हैं। अब सत्संग क्या हो?

श्री 'च' के पास जाऊं तो जैसे उनके पास समय की बड़ी चोरी है। खोए-खोए से रहते हैं। काम के अम्बार सिर से पैर तक ढके हुए हैं। एक मिनट की भी फुरसत नहीं।

वाह रे हमारे गांव! तू जिसे जो न बना दे! काजल की कोठरी हो गया है तू! अपना अलग रंग रखने वालों को तरंग बनाकर किनारे लगा देते हो और शेष को अपनी कालिमा में इस प्रकार डूबो देते हो हो कि पहचान में नहीं आते।

और तो और, मेरा मित्र 'छ' है। एक दिन मिला। बोला, 'भाई क्या बात है आजकल आते नहीं हो? हमें तो फुरसत ही नहीं मिलती कहीं आने-जाने की। स्कूल के काम से छुट्टी मिलते ही घर-गृहस्थी। एक भैंस ले लिया है। अब समझो कि पूरे तौर पर हमारे जिम्में हैं। हां, एक दिन आओ बढ़िया दही पर सही हो!

अच्छा साहब तो मैं अपने मित्र के गांव पर एक दिन पहुंच ही तो गया। गांव के बाहर बरगद की छाया से तर इंजीनियर साहब का बैठकखाना है। पास आते ही एक आदमी ने बुलाया। मालूम हुआ कि साहब आए हैं।

'प्रणाम मास्टर साहब! आइए आप भी अच्छे मिले!' साहब ने कहा और आशीर्वाद देकर मैं भी बैठ गया।

'कहिए कैसे आगमन हुआ?'

'चला तो था शंकरभाई से मिलने पर साइत अच्छी रही, देखिए

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

आप भी मिल गए। अब तो आप पहचान में ही नहीं आ रहे हैं !'

'साहब मुसकराए और बात बदल दी।

'कहिए, क्या हाल-चाल है ?'

'क्या कहूं' गांव में रहता हूं। गंवार हूं। किसी प्रकार गांव की मनहूसी के अंकों को बढ़ाता हुआ जी रहा हूं।'

'हां, मास्टर साहब, ठीक कहते हैं। गांव में कोई लाइफ नहीं है। देखिए न, एक सप्ताह की छुट्टी पर हूं पर यहां एक दिन भी कटना पहाड़ हो गया है।'

'जरूर पहाड़ हो जाएगा।'

'पता नहीं कैसे आप लोग यहां जीते हैं। गन्दगी, झगड़े और मूर्खता की इस बस्ती में जानवर ही रह सकते हैं।'

'और क्या ? और जानवरों के बीच कोई आदमी उत्पन्न होता है तो वह छोड़ कर चला जाता है ?'

'तो क्या करें ? यहां सिर खपाएं ? देखिए न, एक घण्टे में ही बुरा हाल हो गया, जैसे सिर पर नौकरी बांध कर लाया हूं। जो आता है, बस लड़के को नौकरी चाहिए।'

'इंजीनियर साहब, हर 'जानवर' यहां चाहता है कि हमारा लड़का शहर में जाकर 'आदमी' बने। आप घबराते क्यों हैं ? तमाम देश को तो आपने नाप-जोख कर बना डाला पर क्या आपने इस गांव के निर्माण के बारे में कुछ सोचा है ?'

'इसके लिए तो आप लोग हैं ही।' वे हंस पड़े। इसी समय स्कूल का छुट्टी वाला घण्टा बजा। मैंने सोचा अब तो शंकरभाई इसी रास्ते से आएंगे ही, मुलाकात हो जाएगी। साहब ने कहा, 'लीजिए आपके मित्र आ गए।'

शंकरभाई पास आ गए। बरगद की छाया में हम लोग बैठे हुए थे। पश्चिम बगल से रास्ता गांव में जाता था। मुझे आशा थी कि मुझे यहां बैठा देखकर वे आएंगे और साथ ही उनके घर हम लोग चलेंगे।

परन्तु यह क्या ? सामने आकर अपने किसी सहयोगी से बात करते-करते उन्होंने एक निगाह इधर फेंकी। मैंने नमस्ते किया। उन्होंने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

नमस्ते का उत्तर देते हुए सिर्फ यही पूछा कि 'कहिए, समाचार अच्छा है न ?' सो भी चलते-चलते और विना मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किए चले गए। पीछे मुड़ कर देखा या नहीं।

मैं पहाड़ पर से गिरकर चकनाचूर हो गया। यह क्या है ? क्या यह उपेक्षा है ? क्यों ? मेरी बोली को लकवा मार गया। फिर सिर झुका लिया।

साहब चालाक आदमी है। बस समझ गए। बोले—घबराइए मत मास्टर साहब, यहां 'विलेज पालिटिक्स' चलती है। हमारे भाई साहब और उस मास्टर साहब के घरवाले दो विरोधी पार्टियों में रहते हैं। मुझसे तो शंकर से पटती थी पर गतवर्ष मैं उनके एक दर्जा आठ फेल कैण्डीडेट को सर्विस नहीं दिला सका शायद इसीलिए नाराज हैं और यही कारण है कि कतराकर निकल गए। आप उनसे जाकर मिलिए।'

'मुझे आपके गांव की 'विलेज पालिटिक्स नहीं चाहिए, मैं तो मित्रता चाहता था पर हार गया। अब मैं अपने गांव पर वापस जाता हूं।'

...तो मैं क्या सोच रहा था ? यही न कि यह छुट्टी का दिन नहीं कट रहा है ! जी, कटे तो कैसे ? किसके साथ ?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

अखबार और अध्यापक

बड़ी मुश्किल है। पण्डित जवाहरलाल नेहरू के पास एक पत्र लिखना चाहता हूं। यह भी सोचता हूं कि ऐसी छोटी बात के लिए उन्हें क्यों परेशान करूं, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि इससे बड़ी बात और हो भी क्या सकती है ?

मेरा दैनिक समाचारपत्र आजकल गांव के पते पर आने लगा है। डाकखाने में जादू है जिसके प्रभाव से आते ही अखबार के सारे पन्ने पांख हो जाते हैं और पलक मारते ही वह गायब। भूले-भटके किसी-किसी दिन के अंक कभी आठ दिन पर, कभी दस दिन पर आ जाते हैं और तब उनका रूप भी दर्शनीय होता है। घिसपिटकर फटी खोल, कभी सुतली से बंधी, कभी बिना खोलका अखबार गुदड़ी जैसा बेपानी बना और अजीब अनाथ सा ! त्राहि-त्राहि करता हुआ ! !

अब मैं अपने अखबार की रक्षा में धनुष-बाण उठाऊं भी तो लक्ष्य कौन है ? सामने सरकार खड़ी है। डाकखाना उसी का है। सील-मुहर, कागज और रजिस्टर दुरुस्त ! सरकारी काम है, खिलवाड़ नहीं।

हे सरकार ! क्या तुम्हारी यही मंशा है कि गांव में अखबार यानी, नयी रोशनी न आने पावे ? तुम्हारे दूध के धोये विभाग में इतनी गन्दगी है तो तमाम दफ्तरों की तो राम जाने क्या गति है ? अखबार अपनी जगह पर हाथी है पर तुम्हारा यह डाक-विभाग तो पूरा घड़ियाल निकला।

अब तो कोई अन्य प्रयत्न न कर भगवान् के भरोसे हूं। देखें गजेन्द्र मोक्ष कब होता है। जो लोग समाचार पढ़ने, भाव-बाजार बूझने अथवा परीक्षा-फल देखने आते हैं उनसे कहता हूं कि हरिकीर्तन करो।

सोते में अखबार, जगते में अखबार, हर घड़ी अखबार और यहां तक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

कि टुनटुन वावू को पढ़ाते समय भी अखवार भूत की तरह सिर पर सवार रहता है।

'ख माने ?'

'खरगोश।'

'ग माने ?'

'गदहा।'

पाठ आगे वढ़ता गया। व्यंजन खतम हो गए। मैंने कहा कि अब याद करो तो अचानक स्वर वाला पन्ना उलटकर टुनटुन वावू प्रश्न करते हैं—'अ माने ?'

'अखवार, अध्यापक।' एक सांस में अनायास कह जाता हूं।

'पंडित जी तो 'अमरूद' बताते हैं।' एक क्षण कुछ चुपचाप सोचकर टुनटुन वावू कहते हैं।

'वह भी होता है।'

मैं उत्तर देता हूं और उत्तर के साथ एक प्रश्न उठता है सीधा-सादा और प्रचलित शब्द अमरूद छोड़कर मैं अखवार और अध्यापक क्यों बोल गया ? ऐसा लगता है मैंने कहा नहीं वल्कि ये शब्द स्वयमेव निकल गए।

आम के पेड़ पर फेंके गए ढेले कभी-कभी पल्लवों के गुच्छे में अटक जाते हैं और बाद में हवा का तनिक भी इशारा पाकर गिर पड़ते हैं और तव वालकों को आवाज सुनकर आम का भ्रम होता है, पर वह तो होता है फेंका गया ढेला।

इसी प्रकार मन में अटकी बात वर्णमाला के सहारे निकल आयी। है न अखबार का प्रभाव ? बच जाता है एक छोटा-सा सवाल। अध्यापक क्यों कहा ? समाधान के लिए दूर नहीं जाना है। अखवार का चिन्तन यदि क्षणिक द्वन्द्व है तो अध्यापक से सम्वन्धित द्वन्द्व स्थायी है।

आज ही गुरु-शिष्य की एक वार्ता सुनने में आयी है—

शिष्य—गुरुजी ! दिन-रात क्यों होते हैं ?

गुरु—तुम देखते हो कि सूरज पृथ्वी के चारों ओर घूमता है···।

शिष्य—मगर, मास्टर साहव, किताव में तो लिखा है कि पृथ्वी ही लट्टू की तरह नाचती हुई सूरज का चक्कर करती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

गुरु—लिखा होगा। किन्तु तुम्हारी जिस किताब में यह लिखा होगा उसके लिखने वाले विश्वविद्यालय के प्रोफेसर हैं। वे हजारों रुपया महीने कमाते हैं और साहब-सूबा की तरह रहते हैं। वे सर्वसमर्थ हैं। वे पृथ्वी को लट्टू की तरह सूरज के चारों ओर नचा सकते हैं। मैं बावन रुपये का नौकर, एक अपना आदमी और कूढ़मग्ज मुदर्रिस भला इतना बड़ा काम कैसे कर सकता हूं?

फिर, यह देखिये कानों में गूंज रही है एक अध्यापक और एक स्कूली डिप्टी-साहब की वार्त्ता—

'डिप्टी साहब! बस अब एक ही लड़का रह गया। उसे भी पास कर दीजिए। ऐसा नहीं हुआ तो मेरी नाक कट जाएगी। आज जिस मोटी साढ़ी वाली मीठी दही की आप मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते नहीं अघाते थे और जिसके स्वर्गीय स्वाद के सहारे डेढ़ गुना भोजन कर गए वह उसी भक्त बालक के घर की भैंस की थी।···मेरी बुढ़ौती का भी ख्याल करें। बाभन होकर भी आपके पैरों पड़ता हूं!'

'हट जाओ सामने से। उसकी पासकराई वापस कर दो। दर्जा पांच की परीक्षा को मजाक बना रखा है? तुम्हारे तो अधिकांश लड़के हर विषय में शून्य पाये थे तिसपर भी तमाम परचा रटा-रटाया था। यह तो कहो कि तुम्हारी मुरौवत से ही कुछ को खींच दिया। अब एक के लिए क्यों जान खाये जा रहे हो? हटो मैं बात नहीं सुनना चाहता।'

'सरकार! बस इज्जत आपके हाथ में है। जिन्दगी भर गुन गाऊंगा और उपकार ढोऊंगा। भगवान् आपको डायरेक्टर बना दे!'

'अच्छा पण्डित! पास करने की एक शर्त है। अपने लड़के से तमाम हिन्दी की वर्णमाला सही-सही लिखा दो। मैं पास कर दूंगा।'

'दुहाई सरकार की! लड़का फेल का नाम सुनकर इतना घबरा गया है कि कवर्ग-चवर्ग में भी गलती कर देगा और एक बात सरकार, पूरी शुद्ध वर्णमाला तो आजकल दसवीं कक्षा में भी अनेक लड़के नहीं लिख सकते।'

अब इस वार्त्ता को बन्द कर मैं भाषण करना चाहता हूं। डायरी पढ़ने वालों सुनो—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

'भाइयो ! देश में शिक्षा का स्तर गिर गया है। शिक्षा-प्रणाली बदलना है। चारों ओर सड़ियल व्यवस्था, भ्रष्टाचार राजनीति की जयकार और अनुशासनहीनता का राज्य है। सबसे बड़ी बात यह है कि देश के बालक और बालिकाओं में राष्ट्रीय भावनाओं का विकास हो ही नहीं रहा है। देश कहां जा रहा···।'

—किन्तु इस प्रकार के भाषणों से तो आपके कान पक गए होंगे। दल की, वोट की, तिकड़म की, हवा की, हाथ की, शह की, मात की, गोटी की, गद्दी की, प्रभाव की, सत्ता की, महत्ता की, आफिस की, हार की, जीत की, और जनता की बातों के बीच-बीच में विकास और राष्ट्रीयता की ये बातें मानो स्वाद बदलने के लिए आ जाती हैं।

यह देखिए पन्द्रह अगस्त का जलसा है—

'बालको ! जिन-जिन लड़कों को भाषण और कविता-पाठ के लिए तैयार कराया गया था उनका काम समाप्त हो गया। अब अपने मन से जिन लड़कों को कुछ कहना हो वे खड़े···शाबाश···यह हमारा स्कूल जिले में बहुत नामवाला है···हां···खड़े हो···अरे···कोई नहीं ? कितने खेद की बात है कि इतना बड़ा महान् पर्व और तुम लोग इसका कुछ महत्व ही नहीं समझ रहे हो···खड़े हो···खड़े हो···और कुछ नहीं तो महात्मा गांधी या पण्डित जवाहरलाल नेहरू पर ही दो-चार वाक्य बोलो···ओफ ! ऐसा लगता है कि मेरी आवाज सुनते ही नहीं हो···कोई नहीं···तुम लोग हाई-स्कूल के छात्र हो ? डूब मरो चुल्लूभर पानी में बेईमान···।'

—और उस सभा संयोजक के शब्दों में दो शब्द मैं अपनी ओर से जोड़ देना चाहता हूं कि बालकों को चिल्लू भर पानी में डूब मरना चाहिए तो इस देश के शासक, नेता, शिक्षा-संचालक और अध्यापकों को भी पहाड़ पर चढ़कर कूद मरना चाहिए। क्योंकि देश की नयी पीढ़ी के नव-निर्माण में ये एकदम विफल रहे। निर्माण के नाम पर यदि कुछ हुआ है तो वह है अंग्रेजी का वातावरण। अब तो सुझाव है कि प्राइमरी स्कूल से ही अंग्रेजी की पढ़ाई शुरू की जाय। क्यों नहीं ?

यह देखिए कमिश्नरी स्तर पर होने वाली प्रतियोगिता का समारोह है। कई हजार बालक और कई सौ अध्यापक ! फाटक पर अंग्रेजी,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ध्वज पर अंग्रेजी, बैंज और बिल्ले पर अंग्रेजी, निमन्त्रण पत्र पर अंग्रेजी, सर्वत्र अंग्रेजी, बालकों की पोशाक में भारतीयता शेष है, पर अध्यापक शत्-प्रति-शत अंग्रेजी। यहां तक कि सभा में अंग्रेजी—

'अब हमारे फंकशन के चीफ गेस्ट आज की मीटिंग क्लोज करेंगे और इसके बाद ऐटहोम का प्रोग्राम है।'

चीफगेस्ट का भाषण प्रारम्भ होता है—

'लेडीज और जेन्टिलमैन ? आज की यह मीट···।'

ये चीफगेस्ट देश के एक उच्च कोटि के देशभक्त और शिक्षाविद् के साथ शिक्षाधिकारी बताए जाते हैं।

लड़के चुपचाप भाषण सुन रहे थे।

या खुदा ! मुल्क विलायत बना भी तो बाद आजादी के !

अच्छी तरक्की है। दिन-प्रतिदिन तरक्की है। अपने हिन्दी-अखबार में जिन स्कूलों के विज्ञापन गत वर्ष तक हिन्दी में छपते रहे इस वर्ष क्या ठाट से छपते हैं 'वान्टेड—ट्रेण्ड टीचर्स टू टीच मैथ, केमेस्ट्री एण्ड संस्कृत इन एच० क्लासेस' और टीचर लोगों की राय है कि अंग्रेजी बोलने में ऐसी शान और मर्दानगी है कि क्या कहना !

मैं भी अब एक हैट और टाई खरीदने जा रहा हूं। कोई मेरा नाम भी अंग्रेजी भक्त अध्यापकों में लिख ले।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

अनाचार की आंच

अफ़सोस !

मेरा चश्मा फूट गया।

दोनों आंखें चूर-चूर हो गयीं।

अब मुझे संसार में बुराई ही बुराई दिखायी पड़ेगी। कहीं अच्छाई का नाम निशान भी दृष्टिगोचर नहीं होगा। लाख अपने मन को समझाऊंगा कि 'भले को भलाई बुरे को बुराई' दिखायी पड़ती है, अपना चेहरा ही संसार में शीशे में आदमी देखता है। अथवा भगवान् की बनायी इस दुनिया में कहीं पर कोई खराबी नहीं है। यह सब व्यर्थ होगा। मन दौड़-दौड़कर गलतियों को पकड़ेगा और मैं तंग आ जाऊंगा।

यह तो इस चश्मे का प्रताप था कि कितने चैन से मैं था। कहीं पर कोई बुराई नहीं दिखायी पड़ती थी। सर्वत्र शान्ति, सुव्यवस्था एवं औचित्य दृष्टिगोचर होता था। साधारणतया जो बातें अटपटी जान पड़ती, चश्मा आंख पर चढ़ाते ही असली भेद खुल जाता। गांवों की वर्तमान दशा, शासन व्यवस्था, धर्म, राजनीति, आर्थिक उन्नति, भ्रष्टाचार और शिक्षा-सूत्र पर कितनी ही मूल्यवान और रहस्य भरी सच्चाइयां इस चश्मे के कारण पकड़ में आयीं। क्या बताऊं, चश्मा नहीं होता तो दुनिया के दुःख से मैं मर गया होता।

अब इसके टूटे टुकड़ों को क्या करूं ? अगर कोई वैज्ञानिक अनुसंधान करना चाहे कि साधारण शीशे और पत्थर से इसमें क्या विशेषताएं है तो मैं उसके पास भेज दूं। शायद कोई काम की बात निकल आए। जादू और वरदान पर मेरा विश्वास नहीं है। क्योंकि इस चश्मे को पाने के लिए मैंने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

कोई तपस्या नहीं की थी। एक साधारण आदमी ने साधारण परिस्थिति में इसे हंसते-हंसते दे दिया था। बेचारा भूख-प्यास से परेशान था। एक छोटे-से बक्स को हाथ में लटकाये जिस समय मेरे दरवाजे से गुजरा उस समय दिन के करीब एक बज रहे थे। अप्रैल या मई का महीना था। आंख को चौंधिया देने वाली धूप में बाहर आने वाला चप्पल फटकारता नीम की छाया में जाकर एक मिनट के लिए रुका। मैली कमीज, फटा पायजामा, सिर पर एक छोटी-सी तौलिया डाले लम्बा कद, दुबला-पतला इन्सान! गांव के सुनसान में खोया-खोया।

मैंने बुलाया तो पास आकर उसने सलाम किया और बोला कि क्या आपको चश्मे चाहिए?

'चश्मे तो पीछे चाहिए' मैंने कहा, 'पहले तुम यह बताओ कि तुम्हें अपनी जान से वैर है क्या? एक चिड़िये का पूत भी कहीं डोलता नहीं दिखाई पड़ता है और तुम इसी खरउरिया में खाक छान रहे हो। मिलेंगे खरीदार इस समय? चले आओ भीतर। थोड़ी देर तक आराम करो!'

'आप पहले-पहल मिले बाबू साहब' भीतर बैठते हुए उसने कहा, 'कि इन्सान के साथ इन्सान-सा बरताव कर रहे हैं। आज तो मैं मर ही जाता! गांव में अजब हाल है। कोई किसी को पूछनेवाला नहीं। कहां रुकता? कहां आराम करता? सवेरे से दाना-पानी का ठिकाना नहीं लगा।'

'अच्छा ठहरो, मैं व्यवस्था करता हूं।' मैंने कहा। खा-पीकर वह सोया तो शाम को पांच बजे तक सोता रहा। उठने पर बहुत प्रसन्न दिखाई पड़ता था।

चलने लगा तो बोला—'आज का दिन जिन्दगी भर याद रहेगा। गरीब हूं पर आदमी पहचानता हूं। आपकी खिदमत करने लायक कहां एक चश्मा आपको देना चाहता हूं।'

'मगर मेरी आंखें तो बिल्कुल ठीक हैं? मैंने कहा। 'जरूर' वह हंसा और बोला, 'एक खराबी तो आमतौर से हर इन्सान की नजरों में होती है। वह दुनिया में बुराइयों, गलतियों, खराबियों को देखा करता है!'

'तो क्या यह दृष्टिदोष इससे जाता रहेगा?'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

'जी'।

'वाह! अद्‌भुत चश्मा है! क्या कीमत है?'

'कीमत?' वह चौंक पड़ा, 'कीमत देकर या रुपये से यह चश्मा नहीं खरीदा जा सकता। लीजिए।'

हाथ में लेकर जब तक मैं देखूं, वह एक ओर चला गया। उसे पुकारना चाहा परन्तु गली में मुड़कर वह आंखों से ओझल हो चुका था। बड़े उल्लास से डिब्बा खोलकर मैंने उसे आंखों पर चढ़ाया।

अहा! विश्राम दृष्टि की लहरों पर प्रज्ञा तैरने लगी! पास की वीन टोली में भीषण कलह-युद्ध में हुंकड़वी-फुफुकारती औरतों की वाक्-धारा में हमें ब्रह्मानंद सहोदर काव्यानन्द की अनुभूति होने लगी।

'तोर पूत खाऊं।'

'तोर भतार खाऊं।'

'तोरा सात पुहुत के बोरसी भरूं!'

'तोरा बाप-माई के चुल्ही में लौना लगाऊं।'

'तू रांडा।'

'तू हरजाई।'

'तू···।'

···अरे यह खतम होने को नहीं है? कितनी मस्ती से लड़ रही हैं। किस शान से लड़ रही हैं? क्या चुन-चुनकर शब्द निकाले जा रहे हैं? बेचारी गांव के गरीबों की औरतें हैं। बेकार समय में मुंह की खुजली मिटा रही हैं। क्या करें? इन्हें स्वेटर बुनना या उपन्यास बांचना थोड़े है?··· अरे···रे···रे···संसार से कितनी दूर···गांव की छोटी दुनिया में···संसार से अपरिचित ये भोले जीव। अच्छा ही है संसार को जानकर क्या होगा? ज्ञान-विज्ञान और सभ्यता सीखकर क्या होगा? जमाने के मेल में आकर दौड़ने से क्या होगा? उलझन है, चिन्ता है, परेशानी है, ईर्ष्या है, असन्तोष है और जान पर कितना जोखिम-जंजाल है। इन सबसे दूर अपनी एकान्त कुटी में, झोपड़ी में, टूटे-फूटे घरों में ये गरीब थोड़े में रहते हैं। न अधिक सोचना और न अधिक दौड़ना। न अर्थशास्त्र की आंधी, न राजनीति का वात्याचक्र है। ठीक ही तुलसीदास ने कहा—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

'सबते भले हैं मूढ़—
चिन्हें न व्यापइ जगत गति ।'

चश्मा उतार दिया। जरूर चश्में में गुन है और समय होता दो-चार गाली उन्हें मैं भी सुनाता तथा उनसे भी अधिक चिल्लाकर डांटता-फटकारता 'इन हरामजादियों ने क्षण भर बैठना भी कठिन कर दिया है ! चुप होती हो तुम लोग कि लाऊं डंडा ? डाइन कहीं की।'···परन्तु कैसा परिवर्तन हुआ ? जरूर इस चश्में का भेद किसी को नहीं बताऊंगा।

'चलिए मास्टर साहब लड़के फुटबाल खेल रहे हैं, देख आया जाय !' महेन्द्र ने कहा।

'अभी चलता हूं।' मैंने कहा चश्मा पाकिट में डालकर दरवाजे से नीचे उतरा। बगल वाले घर पर छोटी चहारदीवारी के उस पार से किसी स्त्री ने एक खांची बुहारन की राख फेंकी। खैरियत थी कि हम लोग आगे बढ़ गए। तब भी उड़ी हुई राख की गर्द में डूब ही गए और नाक दबाकर गली में आगे की ओर भागे कि महेन्द्र का जूता बीच रास्ते में किए गए कुत्ते के पखाने पर पड़कर फिसल गया। वह संभलकर बोला—

'क्या नरक है ! देख रहे हो मास्टर ? कैसे इन फूहड़ों के बीच जीते हो ?'

'यह गांव है बच्चा ! प्रयागराज नहीं है। तुम तो रहते हो शहर में न, जहां सड़कों और रास्तों की सफाई निश्चित रूप से हो जाती है। यहां तो गांव की गलियों का कभी ऐसा सौभाग्य नहीं होता कि उन पर झाड़ू चले।'

'क्या लोग अपने-अपने घर के आगे-पीछे का साफ नहीं कर सकते ?'

'तुम घर के आगे-पीछे और बाहर की बात करते हो, यहां घर के भीतर ही कितनी गन्दगी रहती है ? सफाई को लोग समझें तब न ? रास्ते-रास्ते घूर है, खर-पतवार और गन्दगी के कूड़े हैं। कुत्तों ने अजब कर दिया है। इनके मारे नाक में दम है। जहां-तहां इनका पाखाना। गांव के छोटे-छोटे लड़के भी इनसे कम नहीं। स्त्रियों का क्या पूछना ? कितने रास्ते हैं कि बिना नाक बन्द किए चलना कठिन है। देखा न ? कैसे खांची भरकर ऊपर से फेंक दिया। वहीं उसका दरवाजा है। वहीं उसका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

घूर लगा है। आंधी ववण्डर या तेज हवा में सारी राख उड़कर घर में, चौक में, यहां तक कि भोजनों में···मगर, ठहरो महेन्द्र! तुमने हमारा चश्मा देखा है कि नहीं ?' मैंने आंखों पर चश्मा चढ़ा लिया।

'यह चश्मा कब खरीदे हैं ?'

'आज ही तो।'

मैंने कहा और चारों ओर दृष्टि दौड़ाकर वोला—'वास्तव में महेन्द्र वाबू यह राख नहीं गांव की 'विभूति' है। यहां की धूल में विश्व की सम्पदा समायी हुई है। आपने किसी धूल-धूसरित गांव के वालक को देखा है ? आपने राख शरीर पर लपेटे किसी त्यागी साधु को देखा है ? अजी, यह शंकर की तपोभूमि है। यह बौड़मों की गंवई है। यहां सव ऊट-पटांग ही रहना उचित है। अगर राख मटमैली अवीर है तो गांव में, समझो वारह महीने वसन्त है।'

'अच्छा, यह लेक्चर वन्द कीजिए। सुनिए, यह क्या हल्ला है ? लड़के झगड़ा कर रहे हैं क्या ?'

'जरूर झगड़ा करते होंगे। यही जीवन-शक्ति है। जिस गांव के लड़के आपस में झगड़ा नहीं करते समझना चाहिए कि वह मुर्दा है। उनमें, जान नहीं है। मुझे गोवर जैसे सीधे लड़के पसन्द नहीं।'

'तव इसका अर्थ यह है कि हमारे इस गांव के लड़के वहुत अच्छे हैं और जीवन-शक्ति से सम्पन्न हैं।'

'और क्या ?'

'इसीलिए हर साल मैट्रिक में फेल हो-होकर छोड़ देते हैं और परिवार के लिए भार वन वैठते हैं ?'

'भार! भार क्यों ? भार तो पास होकर भी हो जाते हैं। पढ़े-लिखे लोगों को आजकल नौकरी कहां मिलती है ? ये वेचारे तो अच्छे हैं। फेल होकर सानी-पानी और गोवर-गोइठे में मन लगा लेते हैं। नौकरी भी कोई वड़ी नही चाहते। वीस-पचीस रुपये महीने की नौकरी पर भी खुश रहते हैं।'

खेल का मैदान आ गया। सचमुच लड़कों के दो दलों में झगड़ा हो रहा था। मैंने चिल्लाकर कहा—'मेरे प्यारे वच्चो! शान्त हो जाओ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

दोनों दल के नेता बारी-बारी से आकर अपनी-अपनी बात कहें।'

सुखराम ने कहा—'हम पूरब टोल के लड़कों ने मिलकर प्रयत्न किए। पंचायत इन्स्पेक्टर साहब के यहां अर्जी दी। दौड़-धूप की और किसी प्रकार फुटबाल मंजूर हुआ। अब पश्चिम टोल के लोग कहते हैं कि गेंद हम लोगों का है, क्योंकि सभापति हम लोगों के टोल के हैं।'

बुधन ने कहा—'पश्चिम टोल वाले उधर वाली परती में खेलने को कहते हैं क्योंकि वह बड़ी है। इस पर पूरब टोल वाले खींचातानी कर रहे हैं कि इस पूरब टोल की परती में ही खेला जायेगा।'

मैंने कहा—'तुम लोगों के उत्साह से मैं बहुत प्रभावित हुआ। क्या दोनों ओर खेलने भर खिलाड़ी गांव में हैं?'

'हां' कई लड़कों ने कहा।

'ठीक है। दोनों परतियों में खेल होना चाहिए। मैं अगले शनिवार को एक और फुटबाल तुम लोगों को दे दूंगा। जा रहा हूं, पंचायत से मंजूर करा लूंगा।'

उस दिन मैं बड़ा प्रसन्न था। वह प्रसन्नता नित्य बढ़ती ही गयी, मगर, खेद कि आज उस प्रसन्नता का सूत्र वह चश्मा टूट गया। फुटबाल मंजूर होने में सात दिन की जगह सात मास लग गए। उसे लेकर आज बाजार से लौटा तो रास्ते में स्कूल पर मास्टरों ने रोक लिया। राय साहब भी किसी ओर से आ गए—'क्या अंधेर है?'

इस 'अंधेर' शब्द को सुनते ही मैं चौंक गया और चट चश्मा आंख पर चढ़ा लिया और बोला—

'क्या?'

'देख रहे हैं? इस सर्किल से जिले पर होने वाले टूर्नामेंट के लिए छः सौ रुपया मांगा गया है, इसका अर्थ यह हुआ कि कुल नौ सर्किलों से लगभग साढ़े पांच हजार रुपया हुआ।'

'तो क्या हुआ? जिले भर के बालकों का प्रदर्शन और उसमें पांच-छः हजार भी नहीं खर्च होगा तो क्या सौ-दो-सौ में हो जाएगा?'

'जी, लड़के वर्दी-पोशाक स्वयं बनवायें, अपने खर्चे से जायं, अपना खायें-पीयें और चले आयें। फिर, खर्च किस बात का होना है? लाउड-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

स्पीकर, झंडियों और तम्बू-बत्ती में पांच हजार खर्च हो जाता है ?'

'आप समझते तो हैं नहीं। पुरस्कार दिया जाता है। चाय पार्टी में लगता होगा। स्कूलों को खेल का सामान दिया जाता है। यह सब ऐसे ही हो सकता है ?'

'पुरस्कार में मिली कापियों, पेन्सिलों और बंडियों को हम लोग देखते हैं। क्या सबको मिलती है। प्रथम द्वितीय को मिल गई। चाय-पानी भी किसकी खातिर ? अध्यापकों को तो गुड़ का ढेला भी नहीं मिलता। हां, बालकों को एक-एक मुट्ठी चना मिलता है। बस ! रहा स्कूल पर खेल का सामान, तो इसमें क्या पूछना है ? हमारे स्कूलों का रुपया, हमारे स्कूलों को ही देने में नानी मरने लगती हैं। बीस बार नाक रगड़ने पर तो एक बाल्टी मंजूर होती है।'

'बहुत-सी बातें हैं जो समझ में नहीं आती हैं। वास्तव में जो प्रवन्धक होता है वही हिसाब जानता है।'

'हां साहब तो हिसाब क्या कभी अध्यापकों के सामने आता है ? यदि आवाज उठायी तो कतल हो गए।'

'नहीं साहब ऐसी बात क्या है ?'

'आप क्या समझते हैं कि टूर्नामेण्ट में लोग शौक से जाते हैं। का आर्डर होता है कि तैयार होकर चलना पड़ेगा। बच्चों की गरीबी अलग। अभिभावकों की झिड़की अलग और अफसरों का हुक्म अलग अध्यापक तो जैसे किसान हो गया है।'

'किसान नहीं, निर्माता कहिए। महाराज !' देखते हैं, आप लोगों का ही यह वरदान है कि बालक—फूल की तरह उगे, बालक—मिलकर कितना सुन्दर काम करते हैं।'

'—और सारा 'शो' दिखाने के बाद एक तरफ फूलों को फेंक दिया जाता है और माली की जबान पर गुलामी का ताला लगाकर उपेक्षापूर्वक अलग कर दिया जाता है। जब अपने खर्चे से ही नाचना-कूदना है तब स्कूलों का पेट काटकर पांच हजार...।'

'आप तो भ्रष्टाचार की बातें कर रहे हैं।'

'जी।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

'परन्तु शिक्षा की इस पवित्र दुनिया में तो कहीं इस कीड़े का नाम-निशान नहीं है। आपको भ्रम है।'

'हो सकता है।···अच्छा, आप यह बताइए कि यह फुटबाल कितने में खरीदकर लाये हैं?'

'बारह रुपये में।'

'इसी में का फुटबाल बोर्ड से इस विद्यालय को मिला है मास्टर साहब?' मास्टर साहब ने कहा।

'जी, ठीक यही। इसी में का।' मास्टर साहब ने कहा।

'कितना रुपया उसका गेमफण्ड से काटा गया है?'

'बाइस रुपया।'

'बाइस रुपया? असम्भव! यह कैसे हो सकता है' जो गेंद बाजार में बारह रुपये का है वह स्कूल में बाइस रुपये का कैसे आ सकता है? मैंने मास्टर साहब की ओर देखकर कहा।

जिस समय स्कूल का गेंद और रुपये का कागज मेरे सामने आया मैं सन्न रह गया और ठीक उसी समय मेरा चश्मा चड़-चड़ाकर फूट गया। बुराई की आंच न सह सका।

अब मैं सोचता हूं कि सोचने का अन्त ही नहीं होता। हाय, मेरा चश्मा टूट गया!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

एक ग्रेजुएट प्राईमरी टीचर का पत्र

विकासपुर के होनहार प्रसाद का कल एक पत्र मिला और आज जब डायरी लिखने बैठा हूं तो वह पत्र कलम पर सवार हो गया है। मजबूर हूं। जो अपने से लिख जाने लगा है उसे कैसे टाला जा सके। पत्र ज्यों का त्यों है—

मास्टर साहब, अभिवादन ! क्या लिखूं ? ठीक ही है समाचार। मुझे प्राइमरी स्कूल में जगह क्या मिली—'जिमि दसनन मंह जीभ विचारी' की दशा हो गयी और बी० ए० पास होना क्या हुआ जैसे लंकापुरी में पवित्र भगवती भागीरथी की धारा बह गयी ! मुझे तो सब मिलाकर यही प्रतीत होता है कि खोदा पहाड़, निकली चुहिया ! पर विधि का लिखा मेटि नहिं जाई ! ओफ् ! कैसा भीषण अंधकार है ? इस अंधकार का पता उस समय भी कुछ-कुछ था जब मैं यूनिवर्सिटी में अध्ययन कर रहा था और बहुत कुछ आभास मिलने लगा था कि यहां से निकलने के बाद किस प्रकार ठोकर खानी पड़ेगी। अक्सर मैं निराशा में डूब जाता। रोने-रोने जैसा मन हो जाता। मेरे परिवार वालों को यह सब क्या मालूम ? उन्हें तो सीधे यही मालूम था कि वह पढ़ाई बेटा पढ़ रहा है जिसे पढ़कर लोग डिप्टी, कलक्टर इत्यादि हो जाते हैं। अनेक देवताओं की मनौतियां की गईं। डिहवारों को चढ़ावा भाख दियो गया। नौकरी बाद मिलने वाली पहली तनख्वाह सत्यनारायण व्रतकथा, ब्रह्मभोज और भाई-बिरादर के भोज-भात के लिए संकल्प कर दी गयी।

बी० ए० पास हुआ तो आशा बंधी और प्राइमरी की उम्मीदवारी मिली तो जैसे भवसागर पार हो गया। लेकिन दुर्भाग्यवश जिस स्कूल पर परवाना लिए चार्ज लेने पहुंचा वहां मेरी योग्यता की कलई खुल गयी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

और मैं कौड़ी का तीन करार दे दिया गया।

'आपकी योग्यता क्या है ?'

एक उधउमरे मौलवी साहब, स्कूल के हेडमास्टर साहब, एक पैर मेज के ऊपर और एक नीचे किए हुए, मजाक की मुस्कान के साथ पूछ बैठे। मुझे काठ मार गया। उनका ढंग, उनकी भाव-भंगिमा और आंखों की कुटिलता सब एक गुप्त आतंक से भरी हुई थी। मुझे ऐसा लगा कि किसी बड़े जमींदार के यहां चारवाही की उम्मीदवारी में खड़ा हूं। बड़ी कठिनाई से ढाई-तीन शब्द मैंने बुदबुदा दिए और फिर तो मालूम हुआ कि स्कूल में एकदम भूकम्प आ गया।

'क्या ? आप बी० ए० पास हैं ? अरे साहब आप सचमुच बी० ए० पास हैं ? ओ बाबू साहब, अरे मुन्शी जी, इधर आइए। देखिए आप लोग, ये साहब बी० ए० पास हैं। हें…हें…हें…ये एक साहब बी० ए० पास करके यहां आ गए ! क्या जमाना हो गया ?आला तालीमगाह से निकम्मों के पुतले निकलने लगे। इन लोगों को कहीं और रास्ता नापना चाहिए। यहां क्या खाक पढ़ाएंगे ? इसी को कहते हैं कि 'पढ़े फारसी बेचे तेल ! देख भाई कुदरत का खेल !! इत्यादि।

मैं खड़ा-खड़ा देर तक लेक्चर सुनता रहा। पर वह मेरी समझ के बाहर था। हां, बी० ए० पास होने पर जो एक हलका-सा नशा चढ़ा था और नौकरी की खोज के साथ लगी ठोकरों के बावजूद भी कुछ-कुछ खुमार बाकी थी, वह अचानक टूट गई।

काम शुरू किया। महीनों पर महीने बीतने लगे। परिस्थितियों ने मेरे तन-मन को घिसना शुरू किया। मैं सोचने लगा कि पढ़ाई-लिखाई बेकार है। मैं एक तुच्छ अदना इंसान हूं।

तीन महीने बाद दो घटनाएं हुईं। पहली घटना थी इस बात की सूचना प्राप्ति की कि एक महीने का वेतन मिलेगा। वास्तव में इसके लिए मेरी ओर से और मेरे परिवार वालों की ओर से भारी प्रयत्न किया गया था। बी० ए० पास होने और नौकरी प्राप्त करने की मनौतियों को एक में जोड़ दिया गया था। परन्तु इनका सानन्द सम्पन्न होना पहली तनख्वाह पर आधारित था। इधर तनख्वाह मिलना खुदा मिलने की तरह कठिन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

प्रतीत होने लगा। घबराकर तमाम देवी-देवताओं, ब्रह्म और डिहवारों को गुहराकर तेज किया गया। मनौतियों को बारम्बार दुहराया गया और वेतन मिलने के लिए नयी मनौतियां छूटे-छटके देवताओं को भाखनी पड़ी। सत्यनारायण व्रत कथा के अतिरिक्त त्रिलोकीनाथ कथा मान दी गयी और मनोरथ पूरा होने पर पीर बाबा को मलीदा चढ़ाने का संकल्प भी बढ़ गया। इधर संकल्पों के ऊंट बढ़ गए, उनके मुंह बढ़ गए, और उधर वेतन का जीरा तीन महीने बाद चला! खैर, चला तो! मुझे लाज सता रही थी कि इस प्राप्त होने वाले वेतन के रुपयों से अधिक तो घरवाले मुझे प्रतिमास अनेक संकटों के बीच जुगाड़ करके पढ़ाई चलाने के लिए भेज दिया करते थे!

दूसरी घटना थी इस सूचना की प्राप्ति कि सब-डिप्टी साहब का मुआइना होने वाला है। इस सूचना का प्रभाव और अध्यापकों पर तो नहीं के बराबर था परन्तु मेरे ऊपर इसका भारी असर था। मेरे भीतर खोयी शक्ति स्फुरित होने लगी। आत्मविश्वास सुगबुगाने लगा। शिक्षा पनपनाने लगी। मैंने सोचा कि मेरी कीमत मेरे सहयोगी नहीं आंक सकते। इनका दोष भी क्या? यूनिवर्सिटी तो क्या, ये लोग कॉलेज का मुंह भी नहीं देख सके। मिडिल या हाई-स्कूल पास कर मास्टर हो गए। एच० टी० सी० या जे० टी० सी० कर लिया। बस, सुर्खाब का पर लग गया। ये लोग क्या जाने कि ग्रेजुएट क्या होता है? उसके आदर्श कैसे होते हैं? उसका स्टेण्डर्ड कैसा होता है? इसे वही समझ सकता है जो स्वयं ग्रेजुएट है। डिप्टी साहब अवश्य ग्रेजुएट हैं। वे हमारा सही-सही मुल्यांकन करेंगे। वे हमारे ऊपर तरस तो खाएंगे परन्तु बढ़ावा भी देंगे और मेरे साथी जान सकेंगे कि मैं भी कुछ हूं। मैंने पढ़ाने की तैयारी की। स्कूल की सफाई और स्वागत का भार लिया तथा लेड़कों को तैयार किया।

सब-डिप्टी साहब आए। मैंने दोनों हाथ जोड़कर, सिर झुकाकर प्रणाम किया। उन्होंने मेरी ओर देखा भी नहीं।

'तो तुम कब से बी० ए० पास करके भी घास छील रहे हो जवान? रजिस्टरों पर चश्मे के अन्दर से दृष्टि गड़ाए एस० डी० आई० महोदय मेरा और मेरी योग्यता का मजाक उड़ाते हुए बोले।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

मेरे पैरों के नीचे की जमीन खिसकने लगी। होश हिरन होने लगा। मंसूबों का महल चरमरा कर बैठने लगा। वास्तव में मैं सौ मुट्ठी का एक मुट्ठी हो गया बोलती बन्द हो गई, उत्तर क्या देता !

आंखों पर से चश्मा उतारकर डिब्बे से सिगरेट निकालते हुए उन्होंने पुनः कृपा-वृष्टि प्रारम्भ की।

'आजकल क्या ही नए-नए लौण्डों को बोर्ड वाले बिना समझे-बूझे भेज देते हैं। इन्हें न व्यावहारिक ज्ञान है और न कोई शऊर ! बी० ए० पास करना और बात है और सूझबूझ और बात है। बच्चू ! यहां यूनि-वर्सिटी के लेक्चर काम नहीं आयेंगे। यहां होस्टल की मटरगश्ती नहीं चलेगी। यहां तो रगड़ना पड़ता है। तुम्हारे बारे में बड़ी शिकायतें मिली हैं। मुस्तैदी से काम करो वरना मुअत्तल कर दिए जाओगे···।'

हेडमास्टर साहब की कक्षा के लड़के जैसे रोज मौज करते रहते हैं उसी तरह उस दिन भी आनन्द मना रहे थे और वे साहब के स्वागत सत्कार में जुटे थे। मैं शऊर समझने-सीखने की कोशिश कर रहा था। आखिर एक पंखी लेकर मैं भी उन्हें हवा करने लगा। तुलसीदास का एक दोहा मन ही मन दुहराने लगा—

द्वार धनी के पड़ रहो,
धका धनी का खाय !
कबहुं त धनी निवाजिहैं,
जो दर छांड़ि न जाय !!'

इस प्रकार मुआइना खतम हुआ। संयोग से डिप्टी साहब का तबा-दला हो गया। सरगनाई पर उनकी विदाई में एक पार्टी हुई। पार्टी में तमाम सरगनाई भर के मुदर्रिस जुटे। मैं भी अपने मौलवी साहब, हेडमास्टर के पीछे-पीछे पहुंचा। वहां मौलवी साहब घूम-घूमकर मेरा जैसे भण्डा फोड़ करने लगे। 'साहब बी० ए० पास हैं ! देखिए, ये साहब यूनिवर्सिटी से आए हैं।' इत्यादि। उनकी मुस्कराहट, उनके इशारे, उनका हाथ चमकाना, उनका व्यंग्य और उनकी हंसी सब मुझे काटने लगी। मेरी योग्यता ही अयोग्यता हो गई। मैंने अनुमान किया कि मिडिल पास मेरे मौलवी साहब, प्राइमरी-स्कूल के हेडमास्टर, यह प्रदर्शित कर रहे थे कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grar

मेरी मातहती में बी० ए० पास आदमी काम कर रहा है। उनका बड़प्पन फटा पड़ता था और उस बड़प्पन के जुए के नीचे मेरी गर्दन का पुर्जा-पुर्जा उखड़ता जा रहा था।

जब पार्टी में भाषणकर्त्ताओं की लिस्ट बनने लगी तो मैंने भी डरते-डरते एक चिट पर अपना नाम लिखकर सर्गनाध्यापक के सामने पेश किया। उन्होंने उसे देखा और चार टुकड़े कर फेंकते हुए कहा—'अभी उनसठ रुपए पर उम्मीदवारी करो। दर्जा एक के बच्चों को चराओ। बी० ए० पास कर लेने से ही किसी को मीटिंग में भाषण करना नहीं आ सकता। बी० ए०, एम० ए० पास तो आजकल गली-गली घूमते हैं। चले हैं डिप्टी साहब के सामने भाषण करने !'

मैं सहम गया। सोचा, देखना चाहिए कि डिप्टी साहब के सामने कैसा भाषण होता है। मीटिंग में सबसे पीछे बैठा। पीछे बैठने से एक लाभ हुआ। भोजनालय दिखाई पड़ रहा था। गोरस की कहतरियों के साथ आने-जाने वाले लड़के दिखाई पड़ रहे थे। परन्तु कक्षाओं की तरह वहां भी कुछ अभागे छात्र थे, जिन पर न जाने क्यों मार पड़ रही थी ! खैर, नाम बोला गया तो सरगना-अध्यापक जी भोजनालय से दौड़े आए। आज उनके भाषण से हमें सीखना था। उनका लेक्चर शुरू हुआ—

'श्रीमान् डिप्टी साहब, मैं क्या कहता हूं यह तो मैं नहीं जानता हूं परन्तु आप लोग तो जानते ही होंगे। सबसे बड़ा लेट-लतीफ मैं ही हूं। इतना याद है कि एक बार मैं तीन बजे स्कूल आया तो वहां पर डिप्टी-साहब मौजूद थे और उन्होंने मुझसे कुछ नहीं कहा।···मैंने देखा मेरे सभी नायब परेशान हैं। मुंह में धान डाल दो तो जैसे लावा फूट जाय ! मैंने कहा कि वह कौन-सी चीज है जिसके लिए आप लोग इस कदर हैरान हैं ? उन लोगों ने बताया और दही का प्रबन्ध आनन-फानन में हो गया। काम करने का तजरबा आदमी को होना चाहिए (तालियों की गड़गड़ाहट)। डिप्टी साहब के लिए आधी रात को भी मैं एक पैर पर खड़ा रहता हूं···' इत्यादि। शेष भाषण मैं सुन न सका।

अन्त में सब लोगों ने आंसू बहाना शुरू किया। संयोग से एक मिर्चा मेरी जेब में पड़ा था और मैं इस अपराध से बच गया कि डिप्टी-साहब की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

विदाई में मेरे आंसू नहीं निकले।

पार्टी में लौटते समय एक अध्यापक ने जो हाई-स्कूल के साथ जे० टी० सी० कर लिया है, मुझे सलाह दी कि क्या बी० ए० पास करके प्राइमरी स्कूल में सड़ रहे हो। जाकर रोजगार दफ्तर में नाम लिखा लो या कलकत्ते-बम्बई में जाकर भाग्य आजमाओ।

उस दिन घर लौटा तो गांव के डाकखाने के पोस्टमास्टर साहब ने सलाह दी कि हरकारे की वाण्ट है। न हो तो अर्जी दे दो। वहीं गांधी आश्रम के 'तौलिया-विभाग' में एक गमछा बेचनेवाले मित्र थे, उन्होंने कहा कि बी० ए० पास करके यदि तुम गांव में रहते हो तो लज्जा की बात है। चलो, तुम्हें कम्बल मिल में मजदूरों को गिननेवाले चौकीदार की जगह भर्ती करा दूं।

रात में मेरी स्त्री बोली—'मेरे बाप ने पढ़ाई देखकर शादी की, इतना तिलक दिया, इतनी चिरौरी-मिन्नत की। अब मैं वहां क्या जबाव दूं? सहेलियों से क्या कहूं। कितनी गड़ जाने वाली बात है कि तुम बी० ए० पास करके प्राइमरी स्कूल में मास्टर हो।'

अब मैं क्या करूं! मेरी समझ में नहीं आता। आप ही बताइए न, मैं क्या करूं? आपका—होनहारप्रसाद।

होनहारप्रसाद का पत्र मैं कई बार पढ़ गया हूं। जितनी बार पढ़ता हूं उतनी ही बार नई-नई समस्याएं सामने खड़ी हो जातीं हैं। कुछ उत्तर देते नहीं बन रहा है। सोचता हूं, मौन साध लूं, जैसे उनका पत्र मुझे मिला ही नहीं!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

अथक अकथ कथ

आज एक अत्यन्त आवश्यक बात लिखना चाहता हूं। आवश्यक इसलिए है कि अविस्मरणीय है। अक्सर बातें सामने आती हैं और भूल जाती हैं। यद्यपि भूल जाना भी मनोविज्ञान की दृष्टि से एक उत्तम गुण है, परन्तु इस बात को मैं भूलना नहीं चाहता हूं। क्यों का जवाब पीछे बताऊंगा। हां, इतना पहले बता देने में कोई हर्ज नहीं है कि यह बात मेरे अध्यापक जीवन से सम्बन्धित है। एक अध्यापक हमेशा वैसी बातों को सामने रखना पसन्द करता है, जिससे शिक्षा मिलती है। क्योंकि वह शिक्षा की दुनिया में रहता है। वह शिक्षा कमाता है। शिक्षा ही खाता है। वह शिक्षा दान करता है और इस दान के पुरस्कार स्वरूप उसका यह लोक बिगड़ जाता है (शायद परीक्षा के लिए) और परलोक का मार्ग पूर्ण प्रशस्त हो जाता है। इस अलौकिक लाभ को यद्यपि वह वरदान नहीं मानता तो भी विवशता है कि शिक्षा की दुनियां से चिपटा रहे। उसे शिक्षा हर घटना से मिलती है। कभी-कभी ये शिक्षाएं अनमोल होती हैं। आज की बात भी ऐसी ही सारवान् है। इसीलिए इसे लिपिबद्ध करने के लिए मैं आतुर हूं। सोचता हूं कि स्मृति के भरोसे रहना ठीक नहीं है। इस युग में स्मृति का कोई भरोसा नहीं। सो भी अध्यापक के लिए ? एक प्रवाद इस प्रकार प्रचलित है कि अध्यापक का सारा दिमाग लड़के चाट डालते हैं। अगर यह सही न भी हो तो आज यह तो जाहिर ही है कि मानसिक दृष्टि से आज का अध्यापक वर्ग (हमारे ही देश का) स्वस्थ नहीं है। उसके मन को रोगी बनाने वाले शतशः अनिवार्य विषय हैं जो बलात् सिर पर सवार हैं। एक-एक उलझन लाख-लाख मन की है। चिन्ताओं की हजार-हजार सुरसाएं हैं कि बड़े-बड़े महावीर की हिम्मत डोल जाए। बेचारे चार पैसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

के गुलाम गरीब अध्यापक की क्या बिसात है ? ऐसे में क्या याद रखा जाय और क्या नहीं याद रखा जाय ? यही याद रहता है कि 'मैं एक मुदर्रिस हूं' अथवा 'आज छुट्टी नहीं है' अथवा 'अभी वेतन महीनों का बाकी है' तो बहुत समझना चाहिए। फिर, स्कूल ही तो एक नहीं है। उसके सिर पर गांव है, घर है, खेत है, दूकान है और आए दिन ईति-भीति के आसमानी, नागहानी और सुलतानी उपद्रव भी तो अपना रोब दिखाते रहते हैं। मंहगी ने मारकर कमर तोड़ दी और रहे-सहे धीरज को कसौटी पर कसने के लिए अकाल और सूखा मंडराने लगे। किसान को काठ मार गया। आंखों का पानी भाप बनकर उड़ गया। जलते हुए जीवन के सवालों में वह डूब गया। ठीक यही दशा अध्यापक की स्वयं भी है। हमारे कहने का मतलब यह नहीं है कि स्कूल में अथवा उसकी शिक्षा में सूखा पड़ गया है और सारी पढ़ाई-लिखाई जल रही है तथा रस-हीन हो गयी है। यहां हमारा मतलब सिर्फ उस घबराहट से है। अगर यह मान भी लें कि सूखा पड़ गया शिक्षा-संसार में, तो यह भी विचारने पर कुछ गलत प्रतीत होने वाली बात नहीं है। विधाता की वसुन्धरा सूख कर अनुत्पादक हो गयी है। आनन्द का मानो अकाल पड़ गया। सत्य ज्ञान की दरिद्रता चरम सीमा पार कर गयी। चरित्र की हरियाली और नैतिकता के नवांकुरों पर वज्रपात हो गया। सेवा, त्याग आदि गुणों का भविष्य अंधकारमय हो गया। वातावरण या तो घबराहट के रूप में या आन्दोलन के रूप में परिणत हो गया। आजीविका भ्रष्टाचार से परि-व्याप्त हो गयी। इसीलिए मैंने कहा न कि घबराहट है। बेशक भारी घबराहट है। अध्यापकों की दुनिया में मार्मिक संत्रास है। प्राइमरी से लेकर उच्च स्कूलों तक में असहजता है। तरह-तरह की मांग है ऐसी कि पैर लड़खड़ा जाते हैं। लीपापोती है कि माथा ठोंक लेते हैं। बाग के नज्जारे हैं कि अक्ल चकरा जाती है। प्रश्न हैं कि उत्तर ही नहीं। सीधे, साफ और दिन की तरह स्पष्ट सवाल है, बुनियादी सवाल हैं। किन्तु जिसे जवाब देना है वह या तो स्वार्थ में है या नशे में। उत्तर नहीं ही मिल पाता। उत्तर मिलकर होगा भी क्या ? उत्तरों से पेट भरने वाला नहीं। उत्तरों से आवश्यकताओं की पूर्ति सम्भव नहीं। अलबत्ते उलझनों का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

विस्तार हो जाएगा। यहां अपने अध्यापक जीवन में भी यही बात देख रहा हूं। भाषण, वादे, कथन, सुझाव, प्रस्ताव और विचार सुनते-सुनते तथा नैतिकता के पाठ का श्रवण करते-करते कान थक गए। पूर्ण कुंभ के मेले में अध्यापक धक्के खा रहे हैं। प्रयाग-राज दमक रहा है। दमकता रहे! सुनाता रहे वह परलोक और पुण्यार्जन के उपख्यान! यहां तो पेट भरना और तन ढकना एवं परिवार को जिलाना ही पुरुषार्थ की पराकाष्ठा है। जीवन ही तपस्या और तीर्थाटन है। वेतन का सूर्य-ग्रहण और मंहगाई-बढ़ोत्तरी का चन्द्र-ग्रहण नित्य लगा रहता है। गरीबी के गंगाजल का अपूर्व लाभ भी दिनचर्या का एक अंग है। चान्द्रायणादि व्रत नियमित हो गए हैं। यों अध्यापकों को भूख लगती ही नहीं है साधारण पर किंचित साफ कपड़े भी भूख कम कर देते हैं। शेष भूख के लिए अनेक मारक मंत्र हैं। उदाहरण के लिए विविध हुक्मों की गर्दन पर लटकती नंगी तलवारें हैं, ऋषियों की पुनीत गद्दी की रक्षा के दायित्व हैं, देशी साहबों के रोब है, भ्रष्टाचार की जबरदस्ती गले से उतरती कड़वी घूंटे हैं और छात्र, जनता तथा सरकार से प्राप्त 'विशेष प्रकार के सम्मान' पारितोषिक हैं! और भी अनेक बड़ी-बड़ी बातें हैं। 'बड़े-बड़े मसले हैं'। छोटा अगर कुछ है तो सिर्फ अध्यापक का सवाल! क्योंकि इस देश में पहले बड़े प्रश्न बनने चाहिए। प्रश्नों की फौज खड़ी होनी चाहिए। अरबों का निर्माण कार्य होना चाहिए। खरबों के महा-महा आयोजन होने चाहिए। आकाश में सीढ़ी लगनी चाहिए। पाताल से पानी आना चाहिए। बाहर से देखने पर देश को या तो अमेरिका के समान दिखाई पड़ना चाहिए या रूस के समान। (भारत की सूरत शायद महात्मा गांधी के साथ चली गयी) यहीं आकर सवाल होता है कि बाहर से देखने के लिए या दिखाने के लिए तो ये बड़ी-बड़ी बातें हो रही हैं, परन्तु भीतर से निर्माण के लिए क्या होता है? यहीं सवाल आ जाता है शिक्षा एवं शिक्षकों पर। तो यहां अभी यह 'छोटी बात' समझ ली गयी। स्कूल खुले हैं, शिक्षा के उद्देश्य और प्रसार पर लेख छप रहे हैं। उधर पढ़ाई चल रही है, फेल-पास के परीक्षाफल निकल रहे हैं, मशीन चल रही है, पुरजे खड़खड़ा रहे हैं और कोई खास बात नहीं। अजी, इससे राज-काज तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

रुकने वाला नहीं ! फिर, 'मूंदहु आंख कतहुं कुछ नाहीं'। 'नव दिन चले अढ़ाई कोस।' कोल्हू का बैल हो गया शिक्षक। कन्धे पर पुराना जुआ अब भी है। आंखों पर विवशताओं का ढक्कन अब भी है। और खेद ! बालू से तेल निकलता नहीं। सारा वातावरण किरकिरा गया। अध्यापक-जीवन एक लम्बी, गहरी और अखण्ड थकावट हो गया। पुराने उत्साह, लक्ष्य, दृष्टिकोण, भाव और सपने सब भोर के तारे हो गए। भूल गया राग रंग, भूल गयी छकड़ी, तीन चीजें याद रहीं नून तेल लकड़ी। चिन्ता की चट्टान में दबा-दबा जब कभी कुछ सोचा तो मन भर आया। हाय ! क्या कभी वह दिन आएगा जब आदर्श व्यवहार में परिणित होता रहेगा ? क्या कभी अध्यापक को ईमानदारी से काम करने की स्वतन्त्रता, सुविधा, साधन और वातावरण की अनुकूलता मिलेगी?…अब आगे क्या लिखूं ? मूल आवश्यक बात जो लिखने जा रहा था, वह तो छूट ही गयी। आए थे हरि-भजन को ओटने लगे कपास। जैसे अध्यापक का भाग्य उलझकर पीछे छूट जाता है, वैसे ही उसकी मुख्य बात भी अकथ रह गयी। उसी के समान उसकी बातें भी बेचारी हैं। जगह नहीं पाती। दुनिया फिर क्या जानें ? लो, अंधेरा हो गया। लालटेन में तेल नहीं है। तेल दूकान पर है, पर पास में पैसा नहीं है। दुनियां में रोशनी है जरूर, परन्तु वह हर अंधेरे को दूर नहीं करती ! अच्छा, फिर कभी !

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

कोई एक आहट

एकदम शान्ति नहीं है। यद्यपि इस कमरे में कोई कोलाहल नहीं है, परन्तु मस्तिष्क में तूफान नंधे है। यह वाहर की पछिवहीं लू का तूफान उसके आगे कुछ नहीं। जमाने की रफ्तार की तरह यह हर···हर···हर··· हर—हाय हू···हू करके बहनेवाली उत्पाती हवा और अन्धड़ इमारत पर, शिवालय पर, और पाकड़ के पेड़ पर जोर आजमाई कर रहे हैं। उनकी अदृश्य अग्निमय टापों से दुनियां की तरी खन गयी। लाचार जिन्दगी की तरह वंसवारी के वांस सरसराकर झुक जाते हैं। मुरझायी-सी पत्तियां सपट जाती हैं। सूखे वांस वूढ़ों की भाषा में धड़धड़ाकर रह जाते हैं। सत्य की तरह चमचमाती धूप की आंखों में दुनिया के कलंकी गुवार भठ गए। अब वह धूमिल रूप ही सत्य है। मैं इस कमरे में कितना ही शोर करूं या सिर दीवालों से टकरा लूं, यह तूफान, यह हवा की चाल और यह जमाने की रफ्तार रुकने की नहीं। तो भी मैं हार मानने-वाला नहीं। मैं वाहर और भीतर दोनों के तूफान से एक साथ ही निप-टना चाहता हूं और इसीलिए कुछ लिखना चाहता हूं।

यह कौन है जो मेरी कलम को रोक रहा है ? कलम उठाता हूं, फिर रख देता हूं। लिखते-लिखते रुक जाता हूं। सोच-विचार करता हूं। फूंक-फूंक कर पांव रखने के नियम प्रभावित करते हैं। वृन्धन की तरह, मजवूरियों की जाति के और कुछ दुर्वलताओं की नस्ल के तत्त्व कहां से आ गए ?

आंधी का जवाब आंधी है। तूफान का उत्तर तूफान है। जड़ता के इन कच्चे धागों को नागपाश समझ लिया ? इस एकान्त कमरे में बैठे मेरे व्यक्ति को खिड़की से साधिकार प्रविष्ट गरम झोंके छू-छूकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

गनगना देते हैं ? क्या सब पर इनका ऐसा ही प्रभाव पड़ता है ? मैं सोच रहा हूं कि शायद इसका कारण यह है कि मैं इन्हें समझ-बूझ रहा हूं। इन्हें देख रहा हूं। जो उसे देख नहीं रहे हैं, उन पर इसका कोई असर नहीं। इसी धूप में धंसे और कटहे झोंके से खेलते किसान खलिहान में मड़ाई कर रहे हैं। बकरी चराने वाली लड़कियां खेत-खेत में खुशी-खुशी फिर रही हैं। शिवालय पर नंग-धड़ंग कुछ लड़के खेल रहे हैं। रास्ता पकड़े वह एक आदमी लपका हुआ कहीं चला जा रहा है। बरामदे में मास्टर साहब कक्षा पांच के लड़कों को हिसाब पढ़ा रहे हैं। इनकी फाइनल परीक्षा होने वाली है। शिक्षा-जगत की पहली फाइनल परीक्षा। तब कितनी लालसा, कितना उल्लास और कितनी सुखद कल्पना होती है। किसी समय प्राइमरी उत्तीर्ण यानी दर्जा चहारुम पास लोग ही समाज के शिखर थे। उस पीढ़ी के बचे-खुचे लोग आज के पढ़ने वालों को घास-भूसा समझते हैं। कहते कि पढ़ाई-लिखाई एकदम जहन्नुम में चली गयी। तब के प्राइमरी पास और आज के बी० ए० पास एक बराबर हैं।

नहीं कहा जा सकता कि वे गलत कहते हैं और नहीं कहा जा सकता कि वे सही कहते हैं। फरक पैमाने का है। जमाने की रफ्तार का यह पैमाना रबर की तरह ऐसा घटता-बढ़ता है कि बड़े-बड़े अक्किल चकरा जाते हैं। उदाहरण के लिए यहीं पर मास्टर साहब सब लड़कों को हिसाब-पढ़ा रहे हैं—'एक बोतल में सत्तर लीटर सोडावाटर आता है, बताओ ऐसी ही दस सौ और एक हजार बोतलों को भरने के लिए कितने-कितने लीटर सोडावाटर की जरूरत पड़ेगी ?' अथवा 'एक किलोग्राम चांदी का मूल्य एक सौ पचहत्तर रुपया है तो एक डेकाग्राम चांदी का मूल्य बताओ।'

यह है जमाने की रफ्तार ! ये सवाल मेरे सामने रख दिए जायं तो फेल। गणित में मैं बहुत तेज रहा। मिडिल की परीक्षा में मुमताज आया था। वह जमाना था रुपया, आना और पाई का, मन, सेर और छटांक का तथा इसी प्रकार मील, फर्लांग और गजादि का। देखते ही देखते जमाने की रफ्तार ने कैसा झटका दिया ? कितनी दूर फेंक दिया गया ? लड़के मीटर, लीटर, किलोग्राम और डेकाग्राम के हिसाब दनादन बूझ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

रहे हैं और मैं पुराना मास्टर कितनी दूर? जमाना आगे बढ़ गया और आदमी पीछे रह गया। ओह, अदम्य वेग है जमाने में। यह आंधी तो मानो उसकी अनुवर्तिनी है और एक हल्की-सी निशानी है। इसीलिए आंधी देखकर भीतर हलचल मच जाती है। पता नहीं, आज इस आंधी ने मेरे भीतर कितना परिवर्तन कर दिया। निस्सन्देह आज का मैं कल बदल जाऊंगा। पता चले चाहे न चले पर यह आंधी, यह जमाने की रफ्तार एक-एक चीज को घिस रही है। चिकना और चमकदार कर रही है अथवा नष्ट कर रही है। यही बेचैनी है। यही छटपटापट है। यही दुख: है। यही संघर्ष है। यही विकास है। यही अशान्ति है। यही द्वन्द्व है। यही परेशानी का कारण है। भीतर ही भीतर उबल रहा हूं, जल रहा हूं पर कुछ हाथ आता नहीं। कलम के फावड़े से उलझन की कड़ी चट्टान तोड़ना चाहता हूं। झंझा के अनबूझ गरम इशारे कहीं ले जाकर पटक देते हैं। पता नहीं कौन-सा मुल्क है। सारी इण्डियों को समेट कर आहट ले रहा हूं। कुछ नया आने वाला है। कुछ नया होने-वाला है। कुछ अच्छा होने वाला है। सचमुच मैं धरती पर होने वाले किसी महान परिवर्तन की प्रतीक्षा कर रहा हूं।

क्या विचित्र बात है कि यह 'इनकलाब' का नारा भी इसी समय लगने लगा। इस चिलचिलाती दोपहरी में यह कैसा जुलूस निकला? कान-पाट लगाकर सुन रहा हूं और समझने की कोशिश कर रहा हूं। ओह, यह तो नाटक का अभ्यास मात्र है। किसी महामंत्री के आगमन के अवसर पर लड़के एक छोटा-सा नाटक पेश करेंगे। यह इनकलाब का नारा किसी दृश्य का एक भाग होगा। 'इनकलाब···जिन्दाबाद' कैसा जोश है? रोयें फरफरा उठते हैं। मुर्दे भारत को जिलाने वाला संजीवन मंत्र! एक समय का वह सत्य आज नाटक हो गया। जमाने की रफ्तार ने यह कैसा इनकलाब बरपा किया! लेकिन वह इनकलाब बहक गया। सचमुच बहक गया। और, क्या जानें इस बहकने में भी कोई इनकलाब का कीमती रहस्य छिपा हो। मैं चाहता हूं कि वह रहस्य फूटे। जल्दी फूटे। एकदम ठीक वक्त आ गया है। यह समाज, यह मनमानी, यह उच्छृंखलता, यह गरीबी, यह शोषण, यह अनीति, काले-कारनामों की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

कतारें और हजारों-लाखों बुराइयों के घाव—सभी सौ-सौ जबान से चिल्लाते हैं कि फिर एक इनकलाब आ रहा है। सब कुछ भटककर किनारे लगनेवाला राही अधिक कुशल होता है।

फिर, 'इनकलाब जिन्दाबाद···।'

'अंग्रेजी कम्पल्सरी (अनिवार्य) होने जा रही है।'

उधर नारा लग रहा है और इधर कुछ अध्यापक बात कर रहे हैं। वाहर हवा के झोंके कुछ नरम पड़ गए। ठीक यही इनकलाब का वातावरण है।

मैं कलम ठोंककर कह रहा हूं कि अब इस अंग्रेजी के दिन लद गए और यही कारण है कि बुझते दीपक की लौ की तरह यह एक वार फिर भभककर लदने जा रही है। बड़ी अच्छी याद आयी। बुझते दीपक की भभकती लौ! इनकलाब का एक जबरदस्त चांटा! मन को करछने वाली सैकड़ों वातें—

यह नौकरशाही का जबरदस्त दौर, यह विकास के साथ विनाश, यह वोट, यह गद्दी की लड़ाई, यह मोटी-मोटी अर्थ-राशियों के मांस पर कुत्तों की तरह छीना-झपटी, ये हवाई किले, ये आसमानी योजनाएं, ये कमाऊ लोगों की नयी नस्लें, रेल, कचहरी, दफ्तर और अफसरों की सर्किल के नए-नए नखरे, डाक-विभाग डाकू विभाग हो गया। वेकारों की वाढ़, परीक्षा, नौकरी और पढे-लिखे भूखों की नयी जाति। शिक्षा? समाज? प्रश्नवाचक पर प्रश्नवाचक? वाहर का ठाठ और भीतर ठन-ठन गोपाल! अरवों रुपये गल गये इस ढिंढोरा पीटने में कि पंचायत राज ने रामराज्य ला दिया! चिराग तले कितना गहरा अंधेरा कोई करे क्या?

और, मैं इन सवका स्वागत करता हूं। धन्यवाद है इस भ्रष्टाचार से भरे जमाने को जो अपनी रफ्तार में न्याय, खुशी और सुख से भरी नयी धरती को उभारने जा रहा है। अफसोस! और खुशी!! आज की यह सारी उच्छृंखल उछलकूद खाद वनकर नयी ज़िन्दगी की पौध उगाने जा रही है। सारा खेल खतम होने वाला है। मत घबराओ मेरी तरह तूफानों से डरनेवालों, मत घबराओ, एकान्त के वेचैन मरीजों,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

मत घबराओ, राह के वेचारे विल-विलाते नारकी मत घबराओ उस इनकलाब को पानी पी-पीकर कोसनेवालो, जिसने आकर मोटों को और मोटा कर दिया और हड्डी की ठठरियों के बीच भी मांस का प्लास्टर कर वेशर्म प्रेत-नृत्य करनेवालों की एक जमात खड़ी कर दी !

करोड़ीमल कहते हैं—
'वहुत खराव युग चल रहा है।'
घुरबिनराम कहते हैं—
'मार डाला जमाने ने।'
वड़ा साहब वोलता है—
'इस युग में सारा मामला अंधेर है।'
छोटा चपरासी कहता है—
'ऐसा जमाना आया कि जिन्दगी जवाल हो गयी।'

सब कहते हैं, वहुत दुःख है। हद दर्जे की लाचारी है। वीहड़ मजबूरी है। इस ज़िन्दगी से मौत अच्छी।

और मनवोध कहता कि यारो, ऐसा अच्छा युग की कहने-सुनने के लिए वड़ी विचित्र-विचित्र वातें शीघ्र छोड़ जानेवाला है। तव तक राष्ट्रीय महाकवि 'दिनकर' के शब्दों में धीरज धारण करो—

'मंजिल दूर नहीं अपनी—
दुख: का बोझा ढोनेवालों !
कालकूट पहले पी लेना,
सुधाबीज वोनेवालों !!'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

तिरपन घंटे बाद

कभी-कभी अजीव विचारों के चक्कर में फंस जाता हूं। यह जानते हुए भी कि ये निराधार मन मानता नहीं है और आधार की खोज में बहकता फिरता है। ऐसा भी होता है कि आधार मिल जाता है और तब ऐसा लगता है मानो गड़ा हुआ खजाना मिल गया। आज सुबह आंखें खुलीं तो एक ऐसा ही विचार-सूत्र आकर उलझ गया। यह जो मेरे सामने दुनियां है, कुछ पीली आभा लिए हरी-हरी दुनिया है, पावस के पवित्र जल से घोयी दुनिया है, यह कल वाली ही दुनियां है अथवा आज बदल गई है ? देखता हूं तो लगता है कि कोई परिवर्तन नहीं है। वह बबूल, कुरूप और कटीला बबूल, जिस पर से हमें नित्य ताजी दातून मिल जाती है, ठीक उसी जगह खड़ा है जहां कल था। वे सामने के हरे-हरे पेड़, वे घरों की खपरैलें और वह ताल की गहराई में चकमता पानी ! कहीं पर कोई नयापन नहीं है। दूसरी ओर मन कहता है कि अवश्य ही कल वाली दुनिया आज नहीं है। वह एकदम बदल गई। खोजो, अवश्य मिल जाएगा परिवर्तन ! और हुआ यह कि दिन भर मैं उसे खोजता रहा। हर चीज को, हर स्थिति को और हर क्षण को ठोंकता-बजाता रहा। किसी चीज की थाह तब लगती है जब उसे हम खोजते हैं। आज मैंने जाना कि परिवर्तन खोजना आसान काम नहीं है।

अन्य दिनों की ही तरह आज भी जल्दी-जल्दी स्नानादि से छुट्टी ली। घटा घिर आयी क्या पावस का वैभव मानो संसार पर छा गया। 'घन घमण्ड नभ गर्जत घोरा, प्रिया हीन डरपत मन मोरा।' मगर, यहां समस्या 'प्रिया' की नहीं बल्कि यह थी कि पांच मील दूर स्थित स्कूल आज कल पूरा परदेश हो जाता है। वह कीचड़ और पंक का रोमांचक युद्ध !

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

याद आती है तो दम फूलने लगता है। यही हड़वड़ी की जड़ थी। अभी सूरज एक बांस भी ऊपर नहीं उठा कि छाता, टोपी और चश्मा दुरुस्त कर 'मंगलम् भगवान् विष्णु:' बोलकर मैंने पयान किया। नित्य ही ऐसा होता है। कहां कुछ परिवर्तन है? वही उबाने वाला रास्ता, मवेशियों के खुर से बने बड़े-बड़े गढ़े, उछलकर सिर पर सवार होने वाला कीचड़, ढोरों को घेरते हुए मस्ती में गाते या बात करते नंगे-धड़ंगे चरवाहे, पानी और कीचड़ में लथपथ घास काटने वाली स्त्रियां, बादलों के बीच से छेद कर आनेवाली तीखी धूप, पसीने में नहाए हुए और धूप से जिनका शरीर रांगे के समान हो गया है ऐसे खेत की निराई करते हुए किसान, पानी के मड़ियाये गढ़े में मिट्टी की मोटी परत शरीर पर लपेटे बैठकर पागुर करती हुई भैंसों का झुंड और इन सबके बीच महुराए घाम में ऊबा हुआ दिल और परेशान चेहरा लिए इधर-उधर आते-जाते लोग। यह सब तो नित्य ही देखता हूं। जिन्दगी ही बीत गयी यही देखते। यह भी कोई नयी बात नहीं थी कि अभी एक मील दूर था कि घण्टे की टन्···न्··· न्···न्···ध्वनि कान के पर्दे पर टकराकर पैरों पर चाबुक चलाने लगी। फिर कन्धे पर जुआ रखकर नाध लिया चौथे पहर तक के लिए। बात याद आती। चली जाती। जरूर कुछ नया नहीं। सब कल वाला है। उत्साह कहां? प्रगति कहां? तबीयत उतर जाती है। कहीं कुछ ऐसा नहीं कि दिल को मुरझाने से रोके और ऐसे में ही सहसा जब निमन्त्रण सामने आया तो एकदम विश्वास नहीं हुआ कि कोठी में मास्टरों की दावत होगी! इतने लोगों को निमन्त्रण? मास्टर और कोठी में दावत? अभूतपूर्व, अश्रुतपूर्व और पूरा रहस्यमय!

शायद यही परिवर्तन था। मगर इतना विशाल परिवर्तन यकायक कैसे? अचरज भीतर का भीतर ही घुमड़ता रहा। चाहे जो हो मास्टर है एक शानदार जीव! कोठी के निमन्त्रण पर अचरज प्रकट कर कौन छोटाई प्रकट करने जाय। यह कोठी वाला तो क्या बड़े-बड़े डिप्टी-कलक्टर भी तो मास्टरों के पढ़ाए इतने उठे। खाली घंटों में लुक-छिपकर बाल मूंड़े गए। उतरे हुए चेहरों पर रंग चढ़ाने के लिए उस पर बार-बार हाथ फेरे जाने लगे। पानी से धोए गए। जूते पोंछ डाले गए। कुर्ते में सिकुड़न है, खैर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

कोई बात नहीं। सादा जीवन उच्च विचार। चार बजते-बजते मास्टर दल में पूरी गुरुता-गम्भीरता आ गयी और कोठी की ओर जब इस टुकड़ी ने मार्च किया तो ऐसा लगा मानो हर व्यक्ति किसी महान् सांस्कृतिक कार्यक्रम का उद्घाटन करने जा रहा है। इस गंभीरता में थोड़ी दरार-सी तब उभर आयी जब किसी ने स्वागत जैसी कोई चीज नहीं दरसायी और बड़ी देर तक ऐसा लगा कि कोई निमन्त्रण नहीं है। मैंने सोचा गलती तो नहीं हो गयी। परन्तु यह द्विधा देर तक नहीं टिकी। श्री जौहर जवाहर नरायणप्रसाद ने आंखें खोलकर उठते हुए मसनद पर शरीर टिकाकर कहा, 'मास्टर लोग आ गए ? अच्छा !'

'जी, नमस्कार।' सब ने हाथ जोड़ दिए।

'नमस्कार।···वागड़ ? ओ बागड़ ??'

'जी मालिक।' बागड़ दौड़ा हुआ आया।

'मास्टर लोगों के भोजन का प्रबन्ध करो।··· कहां ठीक पड़ेगा ?··· वहां तो जगह फंसी हुई है।···यहां ठीक नहीं है···अच्छा देखो पुराने अस्तवल में झाड़ू लगा दो।'

'मगर अभी तो कोई खाने का वक्त नहीं हुआ है।' मैंने कहा।

'वक्त ! अरे, साहब एकदम तैयार है। ताजा-ताजा ! कहा जाता है सिद्ध अन्न पर विश्वास न कीजिए। आप ही लोगों के लिए तो खास-खास चीजें बनवायी। फिर मास्टरों के लिए क्या वक्त ? सारा वक्त अपना है। सवेरे से ही टरन्टर करते हैं। शाम होने का अर्थ है खाने का वक्त होना। क्या बढ़िया जिन्दगी है आप लोगों की···।'

भोजन करते समय ठाकुर साहब भी आ गए। बोले—'कहिए कैसा बना है ?'

'क्या पूछना है ? सब चीजें लाजवाब हैं।' एक ने उत्तर दिया।

'देख रे बागड़ ! और पूड़ी ला।' उन्होंने बागड़ को आदेश दिया और पत्तलों में झांकने लगे।

'नहीं···नहीं···रहने दीजिए। काफी है।' मैंने कहा।

'अरे आप लोग क्या खा रहे हैं ? पत्तल में पूड़ियां ज्यों की त्यों हैं। खूब खाइए। एकदम शुद्ध घी की है। थोड़ी ठण्डी हो गयी है। बरसात का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

मौसम है। अब तो आप लोग देख ही रहे हैं, सभी चीजें आप ही लोगों के लिए अपनी देख-रेख में बनवायी हैं।'

'वाह ! वाह ! ठाकुर साहब, आप नहीं ऐसा करेंगे तो कौन करेगा ? हम लोग खूब खा रहे हैं।' एक अध्यापक ने उत्तर दिया और तेजी से हाथ चलने लगे। मुझे भोजन में एमदम स्वाद नहीं आया, परन्तु इसे मैं अपनी व्यक्तिगत कमजोरी मानता रहा। जब सबको स्वाद आ रहा है तो हमें भी आना चाहिए। जिस स्थान पर कभी किसी ने पानी के लिए भी नहीं पूछा, वहां यह भोजन क्या कम महत्व की बात है ?

मैंने सोचा कल और आज में यही अन्तर है। कल तक अध्यापक उपेक्षित था और आज आदर का पात्र समझा गया। कल तक समाज में अध्यापक भूला-सा था और आज समाज के ऊंचे लोगों ने उसे याद किया है। कल तक लोगों ने शिक्षा की अवहेलना की, आज उसकी प्रतिष्ठा के लिए अध्यापकों की प्रतिष्ठा शुरू की।

भोजन समाप्त करने के लिए घोर प्रयत्न करने पर भी पत्तल में काफी पूड़ियां छूट गयीं। प्रधान ने कहा—परान्नं दुर्लभं लोके:। परन्तु अब आगे हिम्मत किसी ने नहीं की। हाथ धोकर बाहर आए। ठाकुर साहब ने एक-एक इलायची दी। हंसते-हंसते विदा हुए। फाटक से निकलते-निकलते एक मास्टर ने व्यंग्य किया—

'पूरे सप्तऋषि रहे हम सब लोग भाइयो ! इसीलिए तो कोई बुलाता नहीं है।'

'केवल गिनती ही भर तो सात की रही, खाया कितना ?'

एक ने उत्तर दिया।

'हां भाई खाया नहीं गया।'

'वक्त भी तो नहीं था।'

'वक्त की बात नहीं, हमें तो स्वाद नहीं आया।'

'बस भाई, यही तो मैं भी कह रहा था।' मैंने कहा। ट्रेन रुक गयी। देखा, रास्ते पर ढेर से जूठे पत्तल फेंके गए हैं और झुण्ड के झुण्ड हड्डा उस पर झुके हुए हैं। ये पत्तल इतने अस्त-व्यस्त हैं और हड्डा इस प्रकार उड़-उड़कर भनभना रहे हैं कि रास्ता चलना दूभर हो गया है। प्रधान जी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

बोले—

'यह तो भारी दिक्कत हुई। जिस रास्ते से आये उसी से चलना चाहिए था।

'लेकिन भाई, ये इतने जूठे पत्तल कहां से आए ?'

बात खुली। दस कदम आगे बढ़कर एक आदमी से पूछने पर कि परसों दोपहर में ठाकुर साहब के यहां किसी सिलसिले में भोज था। तमाम थाना, पुलिस, अफसर, डिप्टी, कलक्टर, एम० एल० ए०, ए० डी० ओ०, बी० डी० ओ० और लेखपाल, ग्राम-सेवक बुलाकर खिलाए गए। वही पत्तल हैं।

शेष बात भी शीघ्र ही परदे से बाहर आ गयी। परम्परा के अनुसार ठाकुर साहब के यहां इतना अधिक सामान बन गया कि तमाम हाकिम-हुक्काम खा गए। नौकर-चाकर और गांव के अन्य सेवक निहाल हो गए। परसों से ही गांव के ब्राह्मण-भाट खा रहे हैं।

अन्तिम बात मार्के की रही कि हर साल जब कभी भोज होता है तब ऐसे ही सामान बच जाता है और किसी प्रकार नहीं सधता तो जानवरों के आगे फेंक दिया जाता। इस वर्ष सधाने लिए मास्टर लोग बुला लिए गए। तिरपन घण्टे बाद।

अब मैंने परिवर्तन के निर्णय में थोड़ा-सा संशोधन कर दिया। कल तक मास्टरों की समाज में कोई गिनती नहीं थी, परन्तु आज उन्हें कुछ समझा गया तथा जिस सम्मान के अधिकारी कल तक जानवर थे वह सम्मान उन्हें आज मिला।

मैं जहां तक समझता हूं निर्णय अवास्तविक नहीं है। मजबूत बन्धन, चारे के नाम पर घास-भूसा वह भी अनियमित, कन्धे पर जुआ, हांकने वाली सारी दुनिया और एकदम असहाय मूक—यही तो है अध्यापक !

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

मंहगाई भत्ते की ढोल

जो बाजा ठीक करने गया था उसकी कथा इस प्रकार है—

'बी० ए० और एम० ए० पास बजनिया, अद्‌भुत तानबाजी करने वाले, साथ ही साथ ए० क्लास के बाराती भी, कलक्टर, डिप्टी से लेकर एम० एल० ए० और एम० पी० की बारात में जाते हैं, उनके काम और नाम को देखते हुए सट्टा भी कुछ नहीं, महज पांच सौ रुपया रात !'

ये बातें भाई साहब को परसों कालूपुर गांव के मुखदेवजी ने बतायीं, एक बैल खरीदने के सिलसिले में वे गांव पर आए थे। भाई साहब को ऐसी खुशी हुई कि उनके पास सरक गए और आंखों में आंखें मिलाकर बोले—

'तब और चाहिए ही क्या ? मुखदेव भाई, सारी तैयारी हो चुकी है। कमी बस बाजा की रही। असाढ़ की बारात ठहरी। तम्बू और नाच नहीं ले चल रहे हैं। लोगों की राय है कि एक बढ़िया सा बैण्ड कर लूं। आज-कल उसमें नाच भी रहती है। आप जिस बैण्ड के बारे में बता रहे हैं उसमें कोई डांसर तो होगा ही ?'

'और क्या ?' मुखदेव जी ने कहा, बिना नचनियां के आजकल बजनियां किस काम के ? अब वह जमाना गया कि डफाड़ा पीटते और घुघुका बजाते बारात चली जाती थीं। वह चाम का झासा, पतली लकड़ियों से चड़पड़-चड़पड़ बजने वाला भी जाता रहा। अब तो हर बारात में बैण्ड चाहिए। देखते हैं, कैसी उनकी पोशाक होती है ? कैसा नया ढब होता है ? किस प्रकार नये-नये वाद्य यन्त्र मिल रहे हैं ? नयी फिल्म आयी नहीं कि उसकी धुन बैण्डवालों ने लोक लिया !'

मेरे भाई साहब और मुखदेव जी में बातें हो रही थीं परन्तु मेरा ध्यान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

विशेष तौर पर भाई साहब के जूतों की ओर लगा था। कहते हैं कि बेटी की शादी में योग्य लड़कों की तलाश में जूते घिसकर टूट जाते हैं। यहां बेटे की शादी में सुन्दर बाजा खोजते-खोजते भाई साहब का बाटा-कम्पनी वाला पन्द्रह रुपये पनचानवे नये पैसे का बूट घायल सियार की भांति छितरा गया था। जब उन्हें मुखदेव जी से बाजा का सुराग मिला तो प्रसन्नता स्वाभाविक थी। परन्तु इस प्रसन्नता को एक स्वाभाविक और सहज कौतूहल दबा रहा था। बैण्डवालों का इतना पढ़ा-लिखा होना अचरज की बात थी। इसके समाधान के लिए उन्होंने पूछा—

'क्यों साहब, वे बी० ए० पास करके बाजा ही क्या बजाते हैं?'

'अरे महाराज', 'मुखदेव जी ने उत्तर दिया, 'वे केवल एम० ए० और बी० ए० ही पास नहीं है उनमें एम० एड०, बी० एड०, एल० टी०, डिप० इन एड०, शास्त्री, आचार्य, विशारद और विद्यालंकार भी हैं।'

'तब तो ऐसा लगता है कि आप हंसी कर रहे हैं। भला ऐसे लोग बारातों में घूम-घूमकर बाजा बजाते हैं?'

'पेट और परिस्थिति जो न करावे? देखिए, सच तो यह है कि ये बजनिया नहीं हैं। मेरे गांव के दक्षिण-पूर्व के कोने पर स्थित जो बलुआगढ़ गांव है···हां, आपने उसे जरूर देखा होगा, वहीं एक अंग्रेजी स्कूल है। ये सब लोग जो बैण्ड बजाते हैं, उसी स्कूल के अध्यापक हैं।' मुखदेव जी ने कहा।

'अध्यापक हैं?' भाई साहब चौंक पड़े।

'जी हां, अध्यापक हैं।'

'सभी अध्यापक हैं?'

'पूरा स्टाफ ही समझिए। वह जो बड़ा-सा ढोल होता है और जिसे ड्रम कहते हैं तथा जो इतने जोर से बजाया जाता है कि उसकी आवाज से घर की खपरैल खिसकने लगती है। उसे अंग्रेजी के लेक्चरर बजाते हैं। संस्कृतवाले पंडित जी तमूरी पिटपिटाया करते हैं। इतिहास के अध्यापक शक्सफोन और नागरिकशास्त्र के अध्यापक बल्टहार्न पर अपनी कला दिखाते हैं। कमाल का काम है कारनटका। सो, इसे गणित और विज्ञान के अध्यापक बजाते हैं। हिन्दी-विभाग यहां भी उपेक्षित है। हिन्दी टीचर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

को झांझ मिली है। वजती तो खूब झमाझम है पर अन्य सुरीली आवाजों के आगे उसकी क्या विसात है ? अर्थशास्त्री वाले मसक वजाते हैं। एक वार हवा भर दी फिर तो वस उंगलियां भर हिलानी हैं। इसी प्रकार शेष अध्यापकों में से किसी ने फिरात लिया, किसी ने तुरामपट और किसी ने आलकोनियम चुना। महत्व का काम पी० टी० टीचर का है। यह संयोग की ही वात रही कि ट्रेनिंग के सिलसिले में स्काउटिंग इत्यादि के साथ ही उन्हें डांस की भी ट्रेनिंग मिली थी। यहां डांसर विना वैण्ड अधूरा पड़ रहा था। बाहर से रखने पर अपनी मौलिकता जाती रहती। इसीलिए शारीरिक शिक्षक ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस प्रकार यह दल तैयार हो गया।'

मुखदेवजी का कथन सुनकर आई साहव चुप हो गए। मुझे भी कुछ अजीव-सा लगा। मैं सोच रहा था कि इसी प्रकार अनहुई वातों की शकलें उभरती हैं और लोग क्रान्ति कहते हैं। अव हर काम के छोटे-वड़े होने के पैमाने उसे करने वाले स्वयं ही होंगे। इसी बीच चुप्पी तोड़कर भाई साहव ने मुखदेवजी से पूछा—

'···लेकिन, यह वहुत भला नहीं लगता कि ये लोग अध्यापक होकर वाजा वजाते हैं।'

'इसमें भला-वुरा लगने की क्या वात है ? यह तो व्यवसाय हैं। सभी व्यवसाय करते हैं। युग ही व्यवसाय का है। सरकार व्यवसाय करती है। उसके प्रतिनिधि और अधिकारी व्यवसाय करते हैं। 'महाजनो येन गतः स पन्था।'

'तो वे वाजा वजाना और अध्यापन एक साथ कैसे कर लेते हैं ?'

'वाजा वे गर्मी की छुट्टियों में ही वजाते हैं। प्रायः हमारे यहां लग्न-विवाह के दिन भी उसी लम्बी छुट्टी में पड़ते हैं। अध्यापकों के पास शिमला नैनीताल में तरावट लेने के लिए जाने भर पैसा तो होता नहीं। गरमी की छुट्टी यहीं ववण्डर की तरह घूमते और वरातों में धूल फांकते व्यर्थ ही वीत जाती है। सो, एक दो महीने का धन्धा उठा लिया। सैर-मनोरंजन के साथ पैसा भी मिला। सेवा हुई सो अलग।'

'फिर भी मेरी हिम्मत नहीं होती कि जो गुरु लोग वच्चों को शिक्षा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

दे रहे हैं उनसे चलकर कहें कि बाजा बजाइए।'

'अरे साहब, किस गुजरे जमाने की बेसुरी तान आप आलाप रहे हैं। आज तो अध्यापक ही एक ऐसा जीव है जिससे हर काम लिया जा सकता है। वह पीर, बावर्ची और भिश्ती के साथ ही 'खर' भी है। गांव-गांव में वह नेताओं की यशशिविका को कंधे पर लाद कर पहुंचाता है। पार्टी होती है तो जूठे पत्तल फेंकना उसका काम है। कोई अधिकारी या नेता साथ में है तो उसका झोला ढोना उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। जिस सरकारी, अर्द्ध सरकारी या गैरसरकारी बेगारी के लिए कोई नहीं मिलता उसमें चट अध्यापक बुला लिए जाते हैं। आप तो उनकी सेवाओं के लिए पैसा देंगे।'

'ठीक है। इनको ही ठीक किया जाएगा।'

'और दो-चार लाभ सुन लीजिए। इनको बारात में ले चलने से कई समस्याएं हल हो जायेंगी। बैठे-बिठाए सफेद पोश बराती मिल जायेंगे।··· जी हां, उनके लिए एक रावटी करनी होती है। जिससे बाजा बजाने के बाद वे अपनी पोशाक बदलते हैं। जब अपने असली रूप में महफिल में बैठते हैं तो महफिल उग जाती है। वह खादी की चमक, वह टोपी-चश्मा, वह भव्य व्यक्तित्व तथा मुख पर विद्या का वह प्रकाश !···शास्त्रार्थ और बहस भी कोई कर ले। इसके लिए भी आपको कोई आदमी नहीं खोजना पड़ेगा। चाहे जिस विषय का भी सवाल हो, कोई पूछे। बारात में नाच-बाजा के साथ कोई 'बोलता आदमी' भी होना चाहिए। सो, यहां दर्जनों बोलते आदमी प्राप्त हो जाते हैं। संस्कृताध्यापकों को तो बारात में शास्त्रार्थ का एक नशा जैसा है···।'

'हमारे पण्डित तो पढ़े-लिखे नहीं हैं।'

'तब तो महाराज, कर्मकाण्ड की भी समस्या हल। द्वार पूजा से लेकर विवाह तक के सारे काम संस्कृताध्यापक से करा लीजिए। अगर बाजा बजते में कोई मौका आ गया तो उन्हें छुड़ाया भी जा सकता है। तमूरी ही तो बजाते हैं!'

'तो क्या वे लोग खाली होंगे?'

'खाली का जरूर सवाल है तो, जुलाई चल रही है। अब वे बरात

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

नहीं लिए होंगे। कॉलेज खुल गया है। संयोग से आपकी बारात रविवार को पड़ रही है। हां, मैनेजर साहब से स्वीकृति ले लीजिएगा। बहुत सज्जन व्यक्ति हैं। उन्होंने ही स्कूल की ओर से वाद्य-यन्त्रों को खरीदा है। इज़्ज़त का सवाल है। आशा है इनकार नहीं करेंगे।'

इस प्रकार मेरे भाई साहब और सुखदेवजी में बातें हुईं और अन्त में यह काम आ गया मेरे सिर पर। बाजा ठीक करने जाने का पहला मौका था। बजनियों का समाज में नीचे स्थान है, पर अब हर दृष्टि से नीचे वाले उठ रहे हैं। मुझे हर्ष था कि मैं जिनके पास जा रहा था वे बी० ए०, और एम० ए० पास हैं।

मन ही मन में मैंने उस शब्दावली का ढांचा बनाया, जिसमें सट्टा-बट्टा का आरम्भ होगा। 'क्यों महानुभाव आपकी एक रात की सेवा का क्या पुरस्कार होता है?' किन्तु यह बात जंची नहीं। फिर जुटाया 'आपके अनुरंजन कार्य की दैनिक दक्षिणा कितनी होती है?' इस वाक्य से भी संतोष नहीं हुआ। फिर सोचा, 'हमारे यहां के मांगलिक कृत्य के सानन्द सम्पन्न होने में आपका जो अमूल्य सहयोग प्राप्त होगा उसकी मुद्रा रूप में कितनी न्योछावर आपकी सेवा में उपस्थित करना हम लोगों का कर्त्तव्य होगा?' यह वाक्य कुछ जमा और विशिष्ट बजनियों के गौरव के अनुरूप जंचा। पर ज्यों-ज्यों स्कूल निकट आने लगा सारा मंसूबा शिथिल पड़ने लगा। यहां तक कि अध्यापकों को देखकर पूरा यकीन हो गया कि यह एक मजाक की ही बात है। बैण्ड के बारे में पूछने की हिम्मत नहीं हो रही थी और जब किसी प्रकार साहस करके पूछ दिया तो जो उत्तर मिला उससे पूरे मामले में विस्फोट हो गया। उस एक अध्यापक के वाक्य अब भी कानों में गूंज रहे हैं—

'···तो, यह बात इस रूप में चारों तरफ फैल गयी क्या? हम लोग बैण्ड बजाते नहीं हैं बल्कि बजाने की तैयारी है! जी हां, इस वर्ष के इसी बीते महीने से यह निश्चय किया गया है···कारण? कारण तो बहुत साफ है। मंहगाई के भत्ते के लिए हायर सेकेण्डरी स्कूलों के अध्यापकों ने रोया चिल्लाया तो ऐसी घोषणा हुई कि उनकी बोलती बन्द हो गयी।···बैण्ड बजाने के निश्चय से इसका सम्बन्ध यों है कि जब देखा गया कि इस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

घोषणा के साथ व्यवस्था ने लाज-हया छोड़कर एक गहरी तिजारत कर दी और प्रति अध्यापक लगभग चार रुपया उसे लाभ होने जा रहा है तो हम लोगों ने भी मान-प्रतिष्ठा को तिलांजली देकर व्यवसाय के रूप में बाजा बजाने का निश्चय किया। बाजा बजाने की ही बात इसलिए सोची गयी कि पैसा मिलने के साथ ही समाज के सुयश का भी प्रचार होगा।··· ···जी हां, कुछ-कुछ बजाने का अभ्यास हो गया है। अभी तो बैण्ड-मास्टर ने 'गाड सेव द किंग' के आभास पर एक ही गति सिखलायी है—जिसके शब्द ये हैं—

'यह सरकार जिन्दावाद !
शिक्षा मंत्री जिन्दाबाद !!'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

नरेन्द्र क्या करे ?

फिर यह विज्ञापनों का मौसम आ गया। अखबार सामने आते ही उन्हीं पर आंखें दौड़ने लगती हैं। सब पर नहीं, ख़ास तरह के विज्ञापनों पर, जो आजकल ही बहुतायत से छपते हैं, ध्यान देता हूं। उदाहरण के लिऐं, 'आवश्यकता है तीन जे० टी० सी० और एक ट्रेण्ड ग्रेजुएट जिसने बी० ए० में एक विषय अर्थशास्त्र लिया हो। स्वयं मिलिए या पन्द्रह जून तक प्रार्थनापत्र भेजिए···।'

मुझे अच्छी तरह मालूम है कि मेरी यह रूझान एकदम बे-मतलब है। मुझे किसी जगह प्रार्थनापत्र नहीं देना है, यहीं रहना है और यहीं नौकरी करनी है। दूसरे किस्म के विज्ञापनों पर आंखें न उठाना भी प्रकट करता है कि अध्यापक के सिवा इस जन्म में मुझे और दूसरा कुछ नहीं होना है। एक कहावत कही जाती है कि, 'चालन का चाम घोड़े की लगाम, कायस्थ के गुलाम, ये तीनों बेकाम।' मेरा ख्याल है शब्द का तुक न बैठने पर भी इसमें 'स्कूल के मास्टर' को जोड़ लेना अनुचित नहीं होगा। देखने में आता है कि यह जात भी एकदम बेकाम हो जाती है। जिसके जीवन का एक लम्बा भाग इसी में खप गया उसकी तो बात ही क्या ? जिसने दो-चार वर्ष भी अध्यापकी कर ली वह किसी काम का नहीं रह जाता। उसकी महत्वाकांक्षा तो एकदम मर जाती है। उमंग ठंडी पड़ जाती है और कदम निस्तेज घिसा-पिटा जीवन ढीली-ढाली मशीन की तरह चलता रहता है।

तब क्यों इन विज्ञापनों को देखता हूं ? मैं इस प्रश्न का उत्तर स्वयं नहीं जानता हूं। बस, विज्ञापनों को देखता हूं। कुछ भीतर ही भीतर आनन्द आता है। वैसा ही आनन्द आता है जैसा जन्मज़ात चरवाहे को अपरिचित जगह पर भी मवेशियों के चरते झुण्ड को देखकर हर्ष होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

शायद ही कभी विज्ञापन देखकर कहीं प्रार्थनापत्र देने की बात दिल में उठी हो? हां, जब कभी कोई आकर्षक विज्ञापन आंख के सामने से गुजरता है तो एक पुरानी बात जरूर याद आ जाती है। आज भी यही हुआ।

विज्ञापन नैनीताल के एक स्कूल का है। व्यायाम शिक्षक की जगह खाली है। निर्धारित स्केल के अतिरिक्त निवास आदि की सुविधा है। सोचता हूं कि वह कौन भाग्यवान होगा, जो उस स्वर्ग में जाएगा? वास्तव में नौकरी की जाय तो ऐसे ही स्थानों पर।

लेकिन जब वह पुरानी बात याद आती है तो स्वर्ग के आनन्द का उत्साह फीका पड़ जाता है। अध्यापक के लिए स्वर्ग कहां? उसे सर्वत्र नरक है। वह चाहे जहां कहीं भी जाय उसका दुर्भाग्य पीछा नहीं छोड़ता। अपने मित्र नरेन्द्र बहादुर को ट्रेन पर सवार कराकर जब मैं लौटा तो सोच रहा था कि उसके सौभाग्य का फाटक खुल जाएगा, किन्तु कहां खुला?

बात आज से चार-पांच साल पुरानी है। यही जून यानी विज्ञापनों वाला महीना था, जब एक विज्ञापन देखकर हम लोग उछल पड़े। नरेन्द्र बी० ए० के बाद एल० टी० करके दो साल से बेकार था। स्थान मथुरा के पास किसी विद्यालय में खाली था। प्रार्थना-पत्र भेजा गया। ईश्वर की कृपा से स्वीकृत हो गया और उत्तर आया कि तीन जुलाई को मय सरो-सामान साक्षात्कार के लिए आएं।

घर पर खुशियां मनाई गईं। एक सौ बीस ग्रेड और दस रुपया माहवारी महंगाई की खुशी में नरेन्द्र के बूढ़े पिता स्वयं दूध लेकर गांव के सारे डीहवार देवताओं पर चढ़ा आए। एक जुलाई को सत्यनारायण बाबा की कथा हुई और दो जुलाई को नरेन्द्र ने प्रस्थान किया। तीन जुलाई को वहां साक्षात्कार था। साक्षात्कार क्या एक खाना पूरी करनी थी, क्योंकि मैनेजर ने स्पष्ट लिखा था कि आपकी बेकारी दयनीय है और आप रख लिए जायेंगे।

किन्तु चार जुलाई को उसी प्रकार बिस्तर गोल किए आसमान की ओर फेंके गए ढेले की भांति नरेन्द्र घर वापस आ गया तो सबको बड़ा अचरज हुआ। नरेन्द्र ने विस्तारपूर्वक अपनी कहानी बताई।

नरेन्द्र ने बताया कि जब ट्रेन खुली तो सबसे पहले उसे याद आया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

कि पाकिट में एक सौ रुपए हैं और उसे सफर में सचेत रहना चाहिए। ये रुपए उसकी मां कहीं से गहने गिरवी रखकर लाई थी। पूरे दो वर्ष बाद उसे ट्रेनिंग कॉलिज वाले सूट को निकालने का मौका मिला था। वह उसे बार-बार देखता और कुछ बड़प्पन का अनुभव कर रहा था। वह तनकर बैठ गया और अगले स्टेशन पर सिगरेट और दियासलाई खरीद ली।

ट्रेन जब मुगलसराय से आगे बढ़ी तो नरेन्द्र के डिब्बे, में दो व्यक्ति ऐसे सवार हुए जो उसके ऊपर रहस्यमय दृष्टि फेंकते हुए सामने ही जगह बनाकर बैठ गए। वे आपस में जो बात कर रहे थे उसे नरेन्द्र समझ नहीं पा रहा था। ऐसा लगता था जैसे वे किसी वस्तु का मोल-भाव कर रहे थे। उनमें से एक के बारे में नरेन्द्र को ऐसा अनुभव होता था कि कहीं देखा है। धीरे-धीरे उसे याद आया कि यह वही व्यक्ति है जो बनारस प्लेटफार्म पर ककड़ी खरीदते समय पांच रुपए का नोट भुनाने के लिए विचित्र प्रकार प्रार्थना कर रहा था। इस व्यक्ति की तनी भौंहें, ललाट पर उमड़ी गहरी रेखाएं और शिकारी-सी पैनी निगाहें नरेन्द्र को रह-रहकर खटक रही थीं। उसका साथी अजीब आदमी था। आदमी क्या वह पूरा चूहा था। काला रंग, छोटा मुंह, मुख पर असंख्य सलवटें और झुर्रियां, घुटी हुई छोटी-छोटी मुच-मुची-सी आंखें, नाटा कद और झुके हुए से संक्षिप्त शरीर पर रेशमी कुर्ता। वह तनी भौंहों वाला आदमी इस मूसक मानव को समझा रहा था कि वह यदि 'हत्थे' से नीचे उतरेगा तो 'पंजे' को किसी प्रकार नहीं छोड़ सकता है।

अगले स्टेशन पर जब गाड़ी रुकी तो दो नई बातें हुई। वह घनी भौहों वाला व्यक्ति उतर गया और उसके साथी ने कुछ इस लहजे में नरेन्द्र के सामने सिगरेट बढ़ाई और शौक करने का आग्रह किया जैसे उनकी जान-पहचान बहुत पुरानी है। नरेन्द्र ने सहमते-सहमते हाथ बढ़ाया• परन्तु कुछ सोच-समझ कर खींच लिया और बहुत ही रूखाई के साथ इनकार कर दिया।

जैसे-जैसे उस आदमी ने हिलने-मिलने का प्रयत्न किया वैसे-वैसे नरेन्द्र उससे खिचता गया और वह आदमी कुछ अस्त-व्यस्त-सा अनुभव करते हुए कानपुर में उतर गया। नरेन्द्र को ऐसा लगा कि एक बोझ उतर गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

उसने चाय वाले को आवाज लगाई।

ट्रेन खुली तो नरेन्द्र को यह देखकर बहुत अचरज हुआ कि ठीक उसकी खिड़की के सामने खड़ा होकर वह चूहानुमा आदमी सलामी दाग रहा है। उसने निगाहें सामने कीं तो एक भद्र पुरुष, खादी का तुर्त्ता, मूंछें सफाचट, बाल ऊपर उलटे, हंसमुख चेहरा और आंखों पर धूप का चश्मा, मुस्कराते हुए उसकी सलामी का जवाब हाथ हिला-हिलाकर देते हुए मिला। एक क्षण में ही इस नए आदमी ने व्यवस्थित होकर सिगरेट जला ली।

'आप क्या करते हैं?' अचानक इस नए आदमी ने पूछा।

'मैं अध्यापक हूं।' नरेन्द्र ने उत्तर दिया।

'ऐं! अध्यापक हैं आप?'

'हां। इसमें अचरज की क्या बात है?'

'अचरज? हा···हा···हा···।' उसके ठहाके से पूरा डब्बा गूंज उठा। मिलाने के लिए इतनी तेजी से उसका हाथ आगे बढ़ा कि नरेन्द्र को कुछ सोचने का मौका ही नहीं था। वैसे ही हाथों में हाथ लिए उसने कहा—

'तब पहले ही क्यों नहीं बता दिया कि मैं अध्यापक हूं। आप तो कुछ भी पूछने वालों को ऐसा खार खाए उत्तर देते आए हैं कि कुछ पूछिए मत! बेचारे अध्यापक!'

उस आदमी ने इस प्रकार मुंह बना लिया मानो अध्यापकवर्ग की वेदना से एकदम दब गया हो!

'मैंने आपका तात्पर्य समझा नहीं।' नरेन्द्र ने कहा।

'हम लोग अध्यापक लोगों पर नजर नहीं उठाते।'

'यह तो और गूढ़ बात हो गई। आप लोग कौन हैं?'

'चोर, जेबकट, गुण्डे।'

'ऐं!' नरेन्द्र भौचक्का हो गया।

आगे बड़े प्रेम से उस व्यक्ति ने नरेन्द्र से बताया कि मानव-मनोविज्ञान के सहारे वे अपना शिकार ढूंढ लेते हैं, किन्तु अध्यापकों पर उनका प्रयोग फेल कर जाता है क्योंकि ये लोग मन से बादशाह, टेंट से दरिद्र, पोशाक से धनी, कर्म से मजदूर और बात-व्यवहार में अधकचरे होते हैं। तुमको ही मेरे साथियों ने तुम्हारे चौकन्नेपन और ठाठ-बाट के कारण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

'दरगर माल' समझा और हजारों रुपए का अपना 'आसामी' बनाकर मुझे सौंप दिया। उसने कहा—अब मेरा खयाल है कि आपके पास एक सौ रुपए से अधिक नहीं होगा। खैर, निश्चिन्त होकर चले जाओ। कुछ नहीं होगा। आप लोग तो कलियुग में असली गाय-बाभन हैं। आपका हड़प कर किस पेट में पचाएंगे ?'

नरेन्द्र को लगा कि हवा बदल गई। दुनिया वह न रही। वह कहां आ गया ? आगे उसे उतरना था।

'वीरपुर चलोगे ?'

'अठन्नी लगेगी बाबूजी। कहां जाइएगा। प्रकाशबाबू के यहां ? जाऊंगा।' रिक्शावाले ने कहा।

'चलो कैसे जान गए कि मैं प्रकाशबाबू के यहां जाऊंगा।' नरेन्द्र ने पूछा।

'जान गया।' रिक्शा बढ़ाते हुए उसने उत्तर दिया। 'हर साल इस महीने में इस स्टेशन पर आप जैसे बहुत से बाबू उतरते हैं और प्रकाश बाबू के यहां आते-आते हैं। खूब चली है आजकल उनकी।'

रिक्शावाला बिना पूछे प्रकाश बाबू की प्रशस्ति गाता चल रहा था—'तगड़े एम० पी० हैं। कलक्टर साहब खुद आते हैं। स्कूल, कालेज और चर्खा आश्रम के मालिक हैं। लड़का विलायत में पढ़ रहा है। वोट में मास्टर लोग आगे-आगे झण्डा लेकर चलते हैं। देखिए वह धप्-धप् ऊंची कोठी···।'

ठीक आठ बजे साक्षात्कार पर नरेन्द्र पहुंचा।

'कहिए खैरियत से तो आए ? कोई तकलीफ तो नहीं हुई।' मैनेजर साहब श्री प्रकाश बाबू ने पूछा।

'जी नहीं। सब आपकी कृपा है !' नरेन्द्र ने कहा।

'देखिए एक आत्मा दूसरी आत्मा को पहचानती है। मैं देखते ही पहचान गया कि हमारे नरेन्द्र जी आ गए। आपका चेहरा बताता है कि आप हमारे काम के और सच्चे निकलेंगे। यहां आपको नौकरी नहीं करनी है। आप अपने को अपने घर समझेंगे। मैंने आपके आवास की समस्या हल कर दी है। अभी-अभी मैंने एक आटा की चक्की मंगाई है। मिल से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

लगी दो कोठरियां हैं। एक रही आपकी। फिर, यह तो एक मनोरंजन ही होगा कि रात का काम आप देख लेंगे। सुबह हमारे घर के···अरे, आपके बच्चे आपको कोठी पर बुलाएंगे चाय पीने के लिए और एक दो घंटे आपकी सेवा में रहेंगे। फिर स्कूल कार्य।···भई, नरेन्द्र जी, एक बात के लिए हम माफी चाहेंगे। आप जानते ही हैं कि सरकार कल-कारखाने और बांधों के आगे पढ़ाई-लिखाई पर कत्तई ध्यान नहीं देती। पैसा जो मिलता है ऊंट के मुंह में जीरा हो जाता है। सो मैं आपको···कैसे कहूं कि पूरी सेवा करूंगा। फिर भी, पचहत्तर के लिए काट-पीटकर गुंजाइश करूंगा।···और यह मजबूरी अधिक दिनों तक रहेगी। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के अन्त तक देश की आर्थिक हालत काफी सुधर जाएगी और तब स्कूलों की भी कायापलट हो जाएगी···।'

नरेन्द्र घर राय लेने के बहाने सरक आया। उसकी पूरी कहानी सुनकर प्रश्न उठा कि 'आखिर नरेन्द्र क्या करे? एक ओर बेकारी और भूख! दूसरी ओर शोषण और आत्महनन!!'

तब से फिर नरेन्द्र का कोई पता नहीं चला। हां, विज्ञापनों को देखकर उसकी याद आ जाती है और आज भी वह पुराना सवाल खड़ा हो जाता है कि नरेन्द्र जैसे लोग क्या करें?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

मास्टर कमल

विचारों को घेर रहा हूं। कथा-सूत्र को सुलझा रहा हूं। धैर्य बटोर रहा हूं। ठहरिए, मैं कुछ कहने जा रहा हूं। शायद कहानी है। कमल की कहानी है। वह कमल नहीं, जिसे सूरज अपने कोमल करों से सहलाता है। वह कमल नहीं जो कनक-विहान के अखिल वैभवों के बीच मानसर में विकसता है तथा जिसके चतुर्दिक मधु-गुंजार का संसार होता है। मेरी यह कहानी उस अभागे कमल की है जो समाज के सरोवर में एक दिन आशाओं की मर्ममाधुरी लेकर खिला और खिलते ही मानो उसके लिए शिव का तीसरा नेत्र खुल गया।

कमल ! मेरा मित्र। दिन तारीख और सन् याद नहीं पड़ता, परन्तु आठ-दस वर्ष पूर्व वह एक दिन मेरे यहां आया।

दोस्त ! कृपा प्रभु की। मुझे नौकरी मिल गई। अस्सी पर हस्ताक्षर कर पैंतालिस जेब में आएंगे। चलो बेकार से बेगार भली। दर-दर की ठोकर खाने···।'

'यानी तुम स्कूल मास्टर हो गए ?' मैंने कहा। अपने मित्र का उस दिन का लम्बा लेक्चर मुझे अबतक याद है।···अच्छा है। पवित्र कार्य है। सज्जनों की संगति है। रुपया कम जरूर मिलता है पर दुनिया में रुपया ही राम-लक्ष्मण नहीं है। हमारा लक्ष्य मानवता है। त्याग-तपस्या ही तो जीवन का मेरुदण्ड है और···।

मैं यह कहने ही जा रहा था कि भाई, अब जमाना बदल गया है अतः मुहावरा भी उलट गया। अब 'बेकार से बेगार भली' की जगह भले लोग 'बेगार से बेकार भला' का प्रयोग करते हैं। परन्तु मित्र का प्राथमिक उल्लास देखकर मैं रुक गया। इस बात पर जरूर खेद हुआ कि अभागों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

की लिस्ट में एक नाम बढ़ गया है। मुझे जिस बात की आशंका थी वह उस समय सत्य प्रतीत हुई जब मास्टर बन जाने के दो-तीन मास बाद कमल का पहला पत्र आया। उल्लास हिलने लगा था। उत्साह सशंकित होने लगा था। उसने अपने मैनेजर महोदय की बड़ी तारीफ की थी। वे आदमी नहीं, अध्यवसाय की प्रतिमा हैं। आस्तिक और आध्यात्मिक रुचि से सम्पन्न हैं। लिखा था कि एक दिन उन्होंने अध्यापकों को गौतम बुद्ध के अष्टांग मार्ग का उपदेश दिया। इसी सिलसिले में उन्होंने वाक् संयम की भारी महत्ता बताई। 'मैनेजर साहब' कहकर लोग वाक्-अप व्यय करते हैं। केवल 'साहब' से भी काम चल सकता है। शब्द ब्रह्म है। उन्हें कम-से-कम व्यय करना चाहिए। तब से सभी शिक्षक और अन्य लोग उन्हें 'साहब' ही कहा करते हैं। कमल ने अन्त में लिखा कि सब है परन्तु छह-सात घंटे काम करने के बाद तबियत बुरी तरह टूट जाती है। उस समय चारों-ओर सूना-सूना-सा लगता है। गहरी मनहूसी छा जाती है। निराशा और मजबूरी आकर थकान को थपथपाती है। कुछ ऐसा लगता है कि रुपया जिसे मैं कोई महत्व नहीं देता, आज की दुनिया को अपने इशारे पर चला रहा है। कमल के परिवर्तन पर हमें किसी प्रकार का अचरज नहीं हुआ। यहां तक कि साल बीतते-बीतते उसके पत्रों में घुंघुआते अरमान की दमघोंट जिन्दगी के चित्र उभरने लगे। रोने का अन्त नहीं होता। 'शिक्षक नहीं मात्र नौकर' अथवा 'कहां उच्चादर्श गए? यहां तो एक सडी दिनचर्या पूरे समाज को सड़ा रही है।' ऐसे वाक्य उसके पत्रों में मिलने लगे। यहां तक उसने लिखा कि 'मैं ऐसा अनुभव करने लगा हूं कि अब किसी काम का नहीं रहा' उसके पत्र पढ़कर मुझे ऐसा लगता कि मेरे ही जीवन के बारे में वह लिख रहा है।

एक दिन वह आया। दो ढाई वर्ष में ही बूढ़ा हो गया। चेहरे पर कुछ घबराहट जैसी थी। संयोगवश उसी समय एक मालगुजारी वसूल करने वाला चपरासी हमारे सिर पर सवार था। पास में फूटी कौड़ी भी नहीं थी। चपरासी धमका रहा था कि बछिया कुर्क हो जाएगी। घर द्वार नीलाम चढ़ जाएगा। उससे पिंड छुड़ाना टेढ़ी-खीर थी। वह बार-बार अमीन साहब के पास चलने का हुक्म फरमा रहा था। मित्र के सामने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

अपनी इस भारी वेइज्जती पर आंखों में आंसू आ गए। किसी प्रकार यमदूत से पीछा छुड़ाकर कमल की ओर घूमा। चेहरे पर मुस्कान आई। आंखों में हर्ष हिलोर उठा। समाचार हुए। पर मैंने देखा कि शीघ्र ही कमल कहीं डूब गया। कुछ थाह मिले, अतः पूछा—

'कहो क्या हाल है तुम्हारी सर्विस का ?'

'ठीक है। चल रही है। क्या वताऊं ? भारी आफत है।...'

'आफत तो है ही। हां उसे अव साफ-साफ कहो।'

'क्या साफ-साफ कहूं ? कुछ कहा नहीं जाता।'

'फिर भी ! कुछ तो कहो।'

'जाने दीजिए, हटाइए, कोई वात नहीं। कोई खास बात नहीं।'

'देखो कमल। छिपाओ मत। तुम कुछ कहना चाहते हो। मित्र से छिपाना अपराध है, जरूर कह डालो।'

'अरे आपने झूठ-मूठ शक किया है।'

अवकी वार कमल मुस्कराने की चेष्टा करने लगा और बोला—कोई वात नहीं। यों तो मुर्दारिसी का रोना लगा ही रहता है। ऐसा जलील कोई पेशा भी है ? देश क्या खाक वनेगा ? घनघोर शारीरिक और मानसिक दासता में विलविलाता वर्ग देश का शिक्षक है। हजार बातें हैं जो शिक्षा की जड़ काट रही हैं। लाख वातें हैं जो शिक्षकों को ज्ञान का दरिद्र कुली वनाए हुई हैं।

'यानी तुम्हारे कहने का मतलब यह है कि वे पढ़ाते नहीं, वोझ ढोते हैं।' मैंने कहा।

'और क्या ? तिस पर भी हांफ-हांफ कर, भूखे पेट और दलित इच्छाओं को इस मिथ्या सुआशा में बहलाकर कि अच्छे दिन आ रहे हैं। सच कहता हूं शाम को नित्य वुखार हो जाता है। मित्रगण कहते हैं, इतना काम नहीं किया जाता, परन्तु मैं क्या करूं ? दर्जे में जाता हूं तो अभागे वालकों की भोली सूरतें सारी शक्ति उड़ेल देने के लिए विवश कर देती हैं। मित्र, अव मैं अधिक दिन जीने का नहीं।'

'ऐसा न कहो, मैं तुम्हें वहुत दिनों तक जीवित देखना चाहता हूं।'

जीना मरना अपने वश की वात नहीं। जिस दिन पूरे पर सही कर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

लगभग आधा वेतन मिलता है उस दिन सिर के सफेद बालों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हो जाती है। जर्जर कलेजा और हिल उठता है। क्या तुम्हारे यहां भी यही दशा है ? कमल ने पूछा।'

'नहीं हमारे यहां यद्यपि ऐसी घनघोर दुर्व्यवस्था, नहीं है तथापि यह तो आम बात है कि आज का अध्यापक एक साधारण, तुच्छ, उपेक्षित और शोषित जीव हो गया है। इसका दोष भी किसे दिया जाय ? भ्रष्टाचार तो देश की प्रकृति हो गया है। जमाना काजल की कोठरी हो गया है। कुर्सियां अभिशप्त हो गयी हैं। चाहे कैसा ही सत्यनिष्ठ क्यों न हो, अधिकार पाते ही स्वार्थलिप्त हो जाता है। यह तन्त्र की खूबी है।'

'क्या यह तंत्र कभी बदलेगा ?'

'शक्ति चाहिए शक्ति।'

'शक्ति ?' कमल ने एक लम्बी सांस ली।

शक्ति कहां है ? सरकार कहती है—आप वशिष्ठ, विश्वामित्र के उत्तराधिकारी हैं। सेठ का लड़का जब तक डांट देता है कि आप तो हमारे मुनीम के बराबर भी पैसा नहीं पाते हैं। स्त्री का नित्य का ताना है कि मिडिल पास पटवारी का मकान पक्का हो गया और तुमने क्या कोदो देकर बी० ए० की डिग्री ली कि खाने का ठिकाना नहीं। व्यवस्था कहती हैं कि शिक्षा के लिए बजट नहीं। थोड़े में काम चलाओ। उस थोड़े में थोड़ा स्थायी घूस में गया और जो बचा वह भी छह महीने का बाकी'।

दूसरे दिन सवेरे कमल चला गया। चौथे दिन उसका पत्र मिला, पढ़ कर सन्न रह गया। 'वह वास्तव में मेरे यहां कुछ रुपयों की सहायता के लिए आया था। मेरी परदा-उघाड़ स्थिति देखकर उसे कहने की हिम्मत नहीं हुई। मैंने जाना कि कमल के यहां आजकल वेतन बाकी पड़ जाने के कारण उपवास चल रहा है। कई-कई दिन चूल्हा नहीं जला। सहायता की इच्छा करके भी मैं क्या करता ? गरीब आदमी किसी काम का नहीं। फिर यों ही दिन बीतने लगे। कमल के पत्र कम आते पर कभी-कभी जब आते तो पढ़कर कलेजा मुंह को आ जाता। उसके परिवार में वृद्धि हो गयी। व्यय बढ़ गया। वह अक्सर बीमार रहने लगा। डाक्टर ने दूध के सेवन का परामर्श दिया। रुपए की व्यवस्था के लिए ट्यूशन कर लिया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

हालत गम्भीर हो गयी। काम करना असम्भव हो गया। एक मास के चिकित्सावकाश के साथ पिछले चार मास का वेतन उसे मिल गया। वेतन मिलने के दस-पन्द्रह दिन बाद उसके पास एक पैसा नहीं रह गया। तमाम रुपया कर्ज चुकाने पर भी काफी नहीं था। फिर···।

लगभग एक सप्ताह हुए कमल का पत्र मिला। उसने लिखा कि आत्म-हत्या कर डालने की इच्छा होती है क्योंकि बीमारी बहुत धीरे-धीरे मुझे मौत की ओर ले जा रही है। जिस दिन पत्र मिला उस दिन मैंने एक बहुत भयानक सपना देखा। कमल कच्चे केले के छिलके उतार रहा है। उसकी स्त्री आग जला रही है। बच्चे इधर-उधर कांव-किच किए हैं। कुछ मैले कपड़ों में धूल में लोटे हुए हैं। कमल की स्त्री कहती है कि नमक नहीं है। कमल चीख उठता है। 'मेरे सब पैसे कहां गए! इस पर उसकी स्त्री अंगूठा चमका कर कहती है, तुम मर भी जाते तो हमें छुट्टी मिलती!' और यह सुनते ही कमल चाकू छाती में घुसेड़ लेता है। हड्डियों का ढांचा पानी जैसे खून में नहा उठता है। घर में आग लग जाती है। लोग दौड़ते हैं। एक आदमी चिल्ला रहा है—

'कागज में डेढ़ सौ पाकिट में अस्सी,
बिकती बाजार मैं फांसी की रस्सी।'

नींद खुली तो मेरी छाती धड़क रही थी। बस दिन से सांस रोककर एक-एक दिन कमल के पत्र की प्रतीक्षा कर रहा था। आज समाचारपत्र में पढ़ने को मिला की उसकी मृत्यु हो गयी तथा शोक में एक दिन के लिए उसका स्कूल बन्द रहा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

स्वप्न मुक्ति

मैंने देखा कि बड़ी तेजी से मैं किसी ओर चला जा रहा हूं। वास्तव में मैं जान लेना चाहता था कि जिस सीमा तक आंखें देखती हैं उसके बाद क्या है? एक अजब कुतुहल-सा था, संसार के प्रति, जो बेहद खींच रहा था और समग्र रूप से मैं जान लेना चाहता था उसे। मैं यह भी सोच रहा था कि इसे मैं जैसा देख रहा हूं, ऐसा ही है या दूसरे प्रकार का? जो हो इतना तो प्रत्यक्ष था कि यह इतना आकर्षक रहा कि रंगीन परों पर विचारों का पक्षी नाच उठा।

सुन्दर भवन, विशाल ऐश्वर्य, अनन्त रमणीयता, पावन खिल-खिलाहट, मुक्त विहार और सुख की लूट, सब एक से एक आकर्षण। एक से एक शोभा के सरोज! संसार के सरोवर में खिले-खिले!·· पर घर के बन्द घेरे-से वह देखा नहीं जा सकता है मित्रों, इसीलिए मैं घर से एकदम निकल पड़ा था शायद!

मुक्ति का हर्ष मेरे मानस में लहरा उठा। ऐसा लगा कि घर का एक संकीर्ण घेरा अब तक हमें बांधे हुए था। मिट्टी की कच्ची दीवारों के उस पार अमृत लहरा रहा था और मैं प्यास के मारे तड़प रहा था। तो, अब बाहर आकर मैं विह्वल था। अब घर का छोटा-सा घेरा हमें बांध कर नहीं रखेगा। अब विश्व का विशाल प्रांगण मेरे लिए खुला हुआ है। धन्यवाद दिया उसी समय मैंने ईश्वर नाम की किसी अज्ञात शक्ति को जिसकी प्रेरणा से मैं आनन्द लूटने के लिए ललकता हुआ बढ़ रहा था।

मैं इतना प्रसन्न हुआ कि अपने सुख पर इतरा उठा। अपने पैरों की गति का स्मरण कर मेरी छाती भूल उठी, जब मैंने अपनी आंखों के भाग्य पर विचार किया तो मन हरा हो उठा। सारी दुनिया मेरा स्वागत करती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

रही और मैं बढ़ता ही गया।

अपनी यात्रा में मैंने कामिनी का दर्शन किया और पुलकित हो उठा। कांचन को सतृष्ण नेत्रों से देखा। रुपया देखकर आत्मविस्मृत होकर नाच उठा। रोटी ने बरबस चारों ओर से ध्यान हटा-हटाकर सतत अपनी ओर खींचा। काम ने गुदगुदाया और यात्रा-पथ के इधर-उधर वसन्तादि षट्-ऋतुओं को थिरकते देखकर ताल-ताल पर स्वयं भी मतवाला होकर झूम उठा। सृष्टि के कण-कण को मधुर प्यास में, मादक आशा में और अशेष अतृप्ति में विह्वल पाया।

बहुत घूमा पर थका नहीं। बहुत देखा पर रुका नहीं। प्रातः, संध्या, मध्याह्न, निशीथ, न जाने कितने आए और गए। तारक खचित चन्द्रहार धारिणी वसुन्धरा ने न जाने कितने चक्कर किए। कितनी चांदनी बिखरी, कितना अंधकार धरा पर पसरा और कितने प्रातः सायं के खग-कूजन अनन्त में विलीन हुए। ऋतुओं ने अपने परिवर्तन से कितने ही रमणीय क्षणों को अवतरित किया। कितना लुभाया और कितना विरमाया, परन्तु मैं—यानी प्रगतिशील मानव—न रुका, रुक न सका। बढ़ता ही गया। अपनी उस अज्ञात मंजिल पर चढ़ता ही गया। अपने मोहक स्वप्न-संसार के पीछे पागल बनकर खिचता ही गया।

चलते-चलते कुछ दूरी पार करने पर ऊंचाई पर चढ़ने जैसा अनुभव हुआ। लोगों ने बताया पहाड़ है। बहुत ऊंचा है। इस पर चढ़ने में प्राणों के लिए संकट है और इसकी चढ़ाई बड़ी विकट है।

चोटी पर चढ़कर मुझे ऐसा लगा कि मेरी नसें फूल उठीं। मैं भारी हो गया मेरी ऊंचाई मानों बढ़ गयी। मैं संसार के अखिल प्राणियों से अधिक भाग्यशाली हो गया। आंखें फाड़-फाड़कर नीचे विश्व को निहारने लगा। देखा, कीड़ों से रेंगते अनन्त मानव समुदाय। वृक्ष, वन, नदी, पठार, झुरमुट, टीले, झाड़ी, तलाब, भवन राजपथ, मन्दिर और चबूतरे सबको देखा। सब पर आंखें घुमायी क्षणभर के लिए यदि कहीं आंखें ठहरी तो दूसरे क्षण पुनः उठ गयीं। यह आनन्द भी शनैः-शनैः बासी पड़ने लगा और एक ऐसा क्षण आया कि पहाड़ की उस उत्तुंगता से जी ऊबने लगा। मनपर उदासी छाने लगी। अकेलेपन के अनुभव ने और घबड़ा दिया। ऐसा लगता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

था कि अब मैं कूद ही पड़ूंगा इस पहाड़ से, भय तो प्राणों का था। परन्तु उदासी भी बड़ी विकट थी। जिस उतार पर कभी चढ़ाई के समय मन ने कुतूहलवश सरसता का अनुभव किया था उसी पाषंण-खण्डों में रस-हीनता की अनुभूति होने लगी। धीरे-धीरे पर्वत से उतर आया और फिर चला तो चलता ही गया। बहुत दूर तक यात्रा की मैंने ऐसे ही।

मुझे स्वाद-सा आने लगा। विश्व में मुझे अधिकाधिक आकर्षण की प्रतीति होने लगी। एक विचित्र नशा-सा छाने लगा। मैं कभी-कभी यह कल्पना करने लगा कि लोग मेरी ओर स्पष्ट संकेत के साथ कहें कि यह बड़ा साहसी आदमी है ! कितनी विशाल यात्रा कर डाली इसने ! अपने सम्मान को सोच-सोच कर मैं दूना हो जाने लगा। चाल-ढाल में नवीनता आ गयी। गरदन ऊंची करके चलने लगा मैं ! एक साहसी यात्री ! जिसने अपने पैरों से पहाड़ों को रौंद डाला। जिस पर चढ़कर दुनिया की आंखें निहाल हो जाती हैं। मैं कोई मामूली आदमी हूं ? अब किस पथ की घास कहां है जिसे मैं रौंद डालूं ? कोई मुझे बता दे।

देश, विदेश, जानी और अनजानी कितनी वस्तुएं सामने आयीं सबको देखा-सुना और पीछे छोड़ता गया। विशेषता एक यह रही कि कहीं रुका मैं एक क्षण के लिए भी नहीं। एक लघुपल भी कहीं मेरे कदमों को विश्राम नहीं मिला। अनवरत श्रम, अविश्रान्त यात्रा अदम्य इच्छा ! क्या कोई ऐसा स्वाद था जो अनचखा रह गया ?

तभी एक क्षण आया कि संसार सिमटता-सा प्रतीत होने लगा। नवीनताओं पर स्याही पुतने लगी। रंगीन धूमिल पड़ने लगी। सौन्दर्य पर जंग लगने लगा और आंखों के आगे की हरियाली मुरझाई-सी प्रतीत होने लगी।

आगे वह अरण्य है।···कुछ उभरा हुआ-सा, कुछ छाया हुआ-सा, कुछ सघन-सघन हरीतिमाओं के मुंहमेल-सा ! मैं देखते ही लपका। जब निकट पहुंचा तो कुछ सुगन्ध-सी आने लगी। मुंह में पानी भर आया। वह स्वर्गीय मधुर सुगन्ध का स्वाद और तभी एक जबरदस्त ठोकर लगी। मैं औंधे मुंह उलट गया। तनिक होश हुआ तो काफी शरमाया और धूल झाड़कर खड़ा हो गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

वाह ! कितने सुन्दर दृश्य अछूते रह गए थे ? पायलों की रुनझुन साफ सुनाई देने लगी। शब्द जो श्रुतिगोचर होते भ्रम में डाल देते ! किसकी ध्वनि है ? वीणा का गुंजन है ? रमणी के कम्बु कंठ से निकला मधु-रव है। यह मादक सुगन्ध क्या है ? छन-छनकर आती है। शीतलता की यह रोमांचित कर देने वाली आह्लादक अज्ञात किरण। अरे, ये सब मिलकर मुझे बावला बना देंगे क्या ! मैं जोर से चल पड़ा।

सामने देखा। अरण्य की एक सीमा रेखा आ गयी। एक क़दम आगे —लेकिन अरे, यह क्या ? मैं अन्धा हो गया। कुछ दिखाई ही नहीं पड़ता। अंधकार का, काजल का पारावार आंखों में लहरा उठा और एक वेदना-पूर्ण चीत्कार में मैं डूब गया।

यह तो बहुत बुरा हुआ। कुछ दिखाई ही नहीं पड़ रहा है। अरे, मेरी आंखों को क्या हो गया ? अभी-अभी तो मैं सारे संसार को निहारता-फिरता था ! हे भगवान् ! तूने यह क्या किया ?

एक जबरदस्ती ठोकर ने पुनः धराशायी कर दिया आगे बढ़ने की तीव्र इच्छा थी जिसने पुनः खड़ा कर दिया। आगे थी कंटीली झाड़ियां। उलझ गया मैं उसमें बुरी तरह। सारे वस्त्र उलझ कर फट गए। सुलझाने के प्रयत्न में इधर-उधर हाथ मारने लगा तो कुछ झड़बेरी के फल हाथ लगे। ···एक दो घड़ी तक सुध-बुध खोकर उनका स्वाद लिया। हाय रे स्वाद ! अब भी पीछा नहीं छोड़ता था।

वास्तविक स्थिति का ज्ञान हुआ तो धक् से हो गया। क्या सचमुच अब दुनिया दिखाई नहीं पड़ेगी ? क्या यों ही अनन्त अन्धकार में भटकते रहना बदा है।

अब समस्या थी कि जाऊं कहां ? इस अरण्य में कल्याण कहां है ? किधर है ? मन में एक मरोड़ उठी। अभिलाषाएं करोड़ उठीं। सोचता हूं, विचारता हूं पर सब व्यर्थ।

अभी परिताप था कि अभी तो मेरे जीवन का यह प्रारम्भ था। अभी-अभी तो मुझे स्वाद आने लगा था। अभी-अभी तो घूमने का मुझे मज़ा आने लगा था।

वे स्वाद, संसार के वे मधुर स्वाद, क्या चक्षु-विहीन अवस्था में चखे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

जा सकेंगे ?

पीछे लौट पड़ा मैं। कांटों ने दुत्कारा और झाड़ियों ने फटकारा। 'अबे अन्धे ! यह स्वाद तो अभी अछूता ही रहा !' पथ की खड़खड़ाती पत्तियों ने व्यंग्य किया। 'ओ सभ्य मानव ! उधर अंधेरे में कहां भटक रहे हो ?' सुन-सुन कर कलेजे पर सांप लोट जाता।

पैरों ने आगे बढ़ने से इनकार कर दिया हाथ से टटोला। कुछ चिकना-चिकना-सा ज्ञात हुआ। सोचा, रास्ता होगा। कदम बढ़ाया तो अर···र ···र···र···र धम्म। कोई सौ फीट नीचे खड्ड में कि कुएं में। होश ठिकाने आ गये। बेहोशी दूर हुई तो दिल की धड़कन बढ़ गयी। पांव फूलने लगे। भय के मारे पसीना छूटने लगा। फिर बोध हुआ। झाड़ियों को नोंच डालने की इच्छा हुई। पत्थर के टुकड़ों को आपस में टकरा देना चाहा। पुनः बढ़ता, गिरता, उठता, लुढ़कता, संभलता और शरीर की दुर्दशा की, परवा किए बिना अब एक धुन में ऊपर चढ़ने लगा। किसी प्रकार जोर लगाकर ऊपर आया।

अब एक स्थान था, जहां बैठ कर मैं सोचने लगा। मेरी यह दुर्दशा ! मैं एक सम्भ्रान्त मानव ! मैं सृष्टि का सबसे उत्कृष्ट जीव ! मेरी यह दुर्गति। ओ सिरजन हार ! किस लिए यह सब ? क्या संसार का स्वाद चखना बुरा है ? तो तू ने स्वाद मात्र को बनाया ही क्यों ?

अपने शरीर पर हाथ फेरा। कई स्थान पर रक्त जमकर चिटचिटा गया था। खरोंच से जगह-जगह छाले पड़ गए थे। एक ही दिन में मैं सूख कर कांटा हो गया। वस्त्र सारे चिथड़े हो गए। जीते-जीते मैं स्वयं को भूत-सा प्रतीत होने लगा। सारी बातें सोच-सोच कर मैं पुनः एक बार सिहर उठा।

जितना खुली आंखों से स्वाद लिया उतना बन्द आंखों से भी लेना पड़ेगा क्या ? जितनी यात्रा वैसे की उतनी दूरी ऐसे भी तय करनी पड़ेगी क्या ? जितना रमणीय दृश्यों में रमण किया उतना भयानक रसों में भ्रमण करना पड़ेगा ?

धीरे-धीरे इसका भी अभ्यास हो गया। ठोकर खाना स्वभाव हो गया। चोट खाना आदत का एक अंग हो गया। मैं एकदम जंगली हो गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

अन्धा पशु हो गया। संसार और संगी-साथी की पहचान रात-दिन सपने के समान आंखों की तमसाच्छादित पुतलियों में फिरा करती।

शेर की गरज सुनते ही सूख जाता। अब वे मुझे खा गए। तब खा गए! झपटकर आक्रमण करेंगे। चोट से आहत कर शरीर को फाड़-चीड़कर लुगदी बना देंगे।···सांप-विच्छूमय है। ये सिहरन के प्रकरण भी अब साथी हो गए तो एक शक्ति आ गयी।

अब मेरा क्या? जी रहा हूं मर भी जाऊंगा। दोनों बराबर! ओ रे जरा से प्राण! तेरी खातिर मैं कितना भागा, डरा, और पीड़ाएं सही। अब तू चट्टान हो जा। मुझे अब भय नहीं। ओ मुसीबतें! आओ। मैं तुझे गले लगाने को तैयार हूं। ओ संसार! तू मुझे बराबर याद करता था। लो, अब मैं तुझे विसर्जित कर रहा हूं। मेरे इस छोटे से हृदय से ओ दुनिया के मेरे संगी-साथी और अखिल दृश्य जगत के स्वाद हट जाओ। स्थान खाली करो। अब इसमें तुम्हारे लिए जगह नहीं। इसमें मैं सारे संसार के मालिक को प्रतिष्ठापित कर रहा हूं। यह अब उसी का मन्दिर है।

ये सब खेल उसी के तो हैं। सुख-दुःख, अन्धकार-प्रकाश, मीठा-कड़ुआ और जंगल-नगर सब उसी के खेल हैं! सोच-सोचकर विह्वल हो जाता। सबसे उत्तेजक विचार यह था कि क्या यह आनन्द आंखवालों को नहीं मिलता?

एक दिन ऐसी ही विह्वल दशा में भटक रहा था कि रथ की घर-घराहट सुनायी पड़ी। मैं रुक गया। यहां राजपथ कहां है? रथ भी पास आकर रुक गया।

अचानक दिव्य सुगन्ध से मन भर गया। यह क्या हुआ? बिना कहे-सुने किसी ने अपने बलिष्ठ, कोमल और शीतल करों के सहारे रथ पर चढ़ा दिया। क्या अलौकिक स्पर्श रहा। रथ चल पड़ा। उसमें वायु जैसा वेग था। मेघ जैसी मन्द घर-घर ध्वनि थी। मैं अवाक् था। कुछ कहना चाहता ही था कि पुनः रथ के रुकने पर कुतूहलवश चुप रह गया। मैं उतार दिया गया। बड़े ही स्पष्ट, मीठे और चिर स्मरणीय ध्वनि से आदेश हुआ—'बेटा? बढ़ जाओ आगे।' मन्त्रमुग्ध की भांति मैं आगे बढ़ा। गहरे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

अन्धकार के गर्भ से प्रकाश की हलकी किरणें उतरने लगीं। आंखों मे दुनिया का काला रूप धूमिल होकर स्पष्ट से शनैः-शनैः स्पष्ट-तर होकर उभरने लगा। क्षितिज में लालिमा विराजने लगी। सरोवर में कमल खिले और इधर सोते से जो मेरी आंखें खुलीं तो स्वप्नमुक्ति से भारी हर्ष हृदय में हिलकोरे लेने लगीं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

सत्यनारायण की कथा

आजकल नित्य ही सत्यनारायण की कथा सुनने को मिलती है, क्योंकि तिलक-विवाह का मौसम है। तिलक और ब्याह जैसे महत्त्वपूर्ण सामाजिक और सांस्कृतिक कार्य बिना सत्यनारायण की कथा-पूजा के कैसे सम्पन्न हो सकते हैं ? सत्य ही तो नारायण, अर्थात् ईश्वर है और हमारे यहां के लोग और कुछ चाहे भले न हों, परन्तु ईश्वर के भक्त जरूर होते हैं। सो, यहां प्रत्येक मांगलिक कार्य के आरम्भ में सत्यनारायण की पूजा और कथा होती है।

आज एक जगह कथा में सम्मिलित हुआ और कथान्त में मन लग गया। कथारम्भ में कुछ इधर-उधर की बातों में मन उलझा रह गया। सोचा, अन्त भला तो सब भला।

कथा इस प्रकार थी—

एक राजा थे। उनका नाम तुंगध्वज था। वे बहुत प्रतापी और यशस्वी थे। एक दिन वे शिकार खेलने के लिए गए और बहुत दूर निकल गए। घनघोर जंगल, अपरिचित स्थान और थकावट भी कम नहीं थी। वापस होते समय सुस्ताने के लिए एक घने वटवृक्ष की जड़ों पर बैठ गए। घोड़े को भी दम मारने का मौका मिला।

पास ही ग्वाल लोगों की बस्ती थी। बस्ती में सत्यनारायण की कथा हो रही थी। कथा के बाद प्रसाद वितरण की बारी आयी तो बड़ी श्रद्धा और आदर के साथ उन लोगों ने राजा के सामने भी प्रसाद उपस्थित किया। राजा ने देखा कि ये लोग बहुत छोटे और नीच हैं। इनके घर गन्दे, इनका शरीर गन्दा और इनके वस्त्र गन्दे हैं। इन्हें बोलने और बात करने का ढंग भी नहीं है। ये अत्यन्त दरिद्र और हीन हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

इस प्रकार की अनेक बातों पर क्षण भर में ही गौर करने के बाद राजा ने मन ही मन निर्णय किया कि खान-पान और लेन-देन तो बराबर वालों में होता है। कहां ये और कहां मैं ? इस जगह थोड़ी देर के लिए बैठ गया तो इसका यह अर्थ नहीं कि साधारण लोगों की तरह प्रसाद फांकने लगूं। इन विचारों के साथ राजा ने प्रसाद को ठुकरा दिया।

ग्वाल लोगों को बहुत आश्चर्य हुआ। वे यह नहीं जानते थे कि यह कौन आदमी है। उनकी दृष्टि में वह वटवृक्ष के नीचे बैठा हुआ एक मुसाफिर था, एक आदमी था और उसे सत्यनारायण का प्रसाद देना आवश्यक था। उनकी दृष्टि में सत्यनारायण से बढ़कर कोई नहीं था, परन्तु उन्होंने जब एक आदमी को इस प्रकार अपना बड़प्पन जनाते देखा तो उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ। वे चुपचाप वापस आ गए।

राजा घर आए। रास्ते भर न जाने क्यों मन बहुत भारी बना रहा। एक दो दिन भी नहीं बीता कि उनके ऊपर आफतों के पहाड़ टूटने लगे। उनका धन-वैभव कपूर की तरह उड़ने लगा। एक-एक करके उनके वंश के चिराग गुल होने लगे और देखते-देखते उनके एक सौ पुत्रों में से कोई पिंडदान के लिए भी नहीं रह गया।

तब राजा का माथा ठनका। वे अपने जीवन के भीतर घुसकर अपने दोषों को टटोलने लगे। अपने एक-एक कृत्यों की छानबीन करने लगे। संकट आदमी को सत्य द्रष्टा बना देता है। अन्तर की आंखें तब खुलती हैं जब गर्व गल जाता है। राजा के सामने से असत्य का पर्दा हट गया। उन्हें सत्य दिखलाई पड़ने लगा। उन्हें स्पष्ट भासने लगा कि उन्होंने नारायण का अपमान किया है। नारायण उनके धन में, मुकुट में, अधिकार में और गद्दी में नहीं वास करते हैं बल्कि वे वहां हैं जहां श्रद्धावान गरीब हैं। उन्हें उस दिन की याद रुलाने लगी। वे पश्चाताप की आग में जलने लगे। असत्याचरण वाले उनके संस्कार झड़ने लगे। राजा वास्तव में सत्यनारायण के भक्त बन गए। उन्होंने सच्चे मन से उनकी पूजा की।

फिर, राजा की बिगड़ी बातें बनते देर नहीं लगी। धन, पुत्र, ऐश्वर्य, प्रताप और कीर्ति तो मिली ही. सबसे बड़ा परम कार्य यह सधा कि मरने पर उन्हें 'मुक्ति' मिल गयी। यह सत्यनारायण का प्रताप है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

अन्त में शिक्षा मिली कि जो आदमी सत्यनारायण का अपमान करता है उसका संसार में प्रत्येक दृष्टि से पराभव निश्चित है। उसे सुख-शान्ति की प्राप्ति आकाश-कुसुमवत् समझनी चाहिए। सत्य ही संसार की धुरी है। मनुष्य रूप में नारायण इस सामूहिक जन-जीवन की गाड़ी खींच रहे हैं। सत्य और नारायण दो नहीं हैं। सत्य का परित्याग है और नारायण का परित्याग सत्य का परित्याग है।

जो आदमी सत्य की पूजा करता है उसके सारे संकट दूर हो जाते हैं। यदि वह बन्दीगृह में है तो मुक्ति मिल जाती है। यदि उसे धनाभाव कष्ट दे रहा है तो शीघ्र ही वह यथोचित द्रव्य-सम्पन्न हो जाता है। इस सत्य की कृपा से ही मान-सम्मान है, कीर्ति-मर्यादा है, तेज-बल है, विवेक-बुद्धि, सुख-आनन्द है और समस्त अभिलषितार्थों की पूर्ति है। इसीलिए सत्य की पूजा घर-घर में होनी चाहिए और होती है। इसीलिए पूजा प्रत्येक नए कार्य और मांगलिक कार्य के आदि में होनी चाहिए और होती है। इसीलिए सत्यनारायण की पूजा प्रत्येक धनी-गरीब, जाति-कुजाति, ठौर-कुठौर और समय-असमय में होनी चाहिए और होती है।

यही कथा का सार है। लेकिन, हमको सन्तोष नहीं है। कथा अपनी जगह पर है और हम अपनी जगह पर हैं, पूजा कहीं और है, मन कहीं और है, सत्य कहीं और है, नारायण कहीं और है और हम उन दोनों से बहुत दूर हैं प्रसाद में आंटा, गुड़ और घी का स्वाद मिलता है। उसमें सत्यनारायण का स्वाद नहीं मिल रहा है। हवनकुण्ड से निकला धूम पुंज हमारी आंखों में लगता है और कड़ुवाहट के साथ वे बन्द हो जाती हैं। उसके लगते ही वे खुल नहीं जातीं। आरती सामने आती है। तो हम जेब टटोलते हैं। पैसे का हिसाब करते हैं। उसकी ज्योति में सत्यनाराण नहीं दिखाई पड़ते। वास्तव में पूरी कथा-पूजा एक कोरी कथा-पूजा कही जाती है। सत्यनारायण का नाम भर है। यहां तक कि हम उसे सुनते भी कहां हैं? हम मुट्ठी भर प्रसाद के लोभी हैं। हम कथा-योजक के सामने अपनी हाजिरी के उम्मीदवार हैं। हम असत्य के कोलाहल में मग्न हैं। हमको शंखध्वनि जगा नहीं पाती। हम पूजा तो करते नहीं, कथा भी नहीं सुनते। यहां मैंने भी कथा का एक भाग ही सुना।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

हमारी स्थिति ठीक राजा तुंगध्वज की है। हम शिकारी हैं। संसार के जंगल में हम प्राणपँण से शिकार के पीछे पड़े हैं। दौड़ रहे हैं, दर-दर भटक रहे हैं, हांफ रहे हैं, अपना शिकार, अपना अर्थ, अपना स्वार्थ, अपना भोग, अपनी लिप्सा, अपनी तृष्णा और अपनी भूख हमको डहका रही है।

हम थककर चूर हो जाते हैं। क्या विषय-वासनाओं के पीछे दौड़कर किसी ने अन्त लगाया है? तब, वट-वृक्ष की छाया में उसकी जड़ों पर सुस्ताने लगते हैं। यह वट-वृक्ष ईश्वर की कृपा है जो एक न एक अवसर प्रदान करती है। परन्तु क्या अवसर से हम लाभ उठाते हैं? हम तो एकदम तने हुए हैं, एकदम गर्व में ऐंठे हुए हैं। हमको सत्य का आभास मिले तो कैसे? हम समझते हैं कि हम राजा हैं, हम ऐसे हैं, हम वैसे हैं। फिर, यह अहम् इस प्रकार अन्धा बनाता है कि सत्य स्वयं प्रसाद बनकर सामने आता है और हम उसे ठुकरा देते हैं। सत्य की कृपा है कि वह एकान्त में, अरण्य में, जनाकीर्ण नगर में, पथ पर, सोते में, जागते में, बैठते-उठते सदा सर्वत्र स्वयं एक विनीत सेवक की तरह हमारे सामने आता है। उस रूप में साक्षात् नारायण पग-पग पर हमें दर्शन देते हैं। मगर, हाय रे हमारा अन्धा अभियान! हम उसे देखकर भी नहीं देखते।

और, हम ठीक तुंगध्वज की तरह आज सब कुछ खोकर हाय-हाय नहीं कर रहे हैं? सत्य के अपमान का और नारायण को ठुकराने का अभिशाप क्या हमारे सामने नहीं है? हम भय से त्रस्त हैं। नाना प्रकार के भय नंगी तलवार बनकर गरदन पर लटके हैं। हम घोर चिन्ता में डूबे हैं। हममें गहरा असन्तोष है। हमें आशंकाएं घेरे हुए हैं। हमारा जीवन टूट गया है। हम खुलकर हंसते नहीं। हम पीड़ाओं के अथाह समुद्र में डूबे हैं। सुख-शान्ति का कहीं पता नहीं। सर्वनाश सामने से गरजता हुआ, उमड़ता हुआ आता प्रतीत हो रहा है। निराशा और अन्धकार के बीच जीवन भार बना है। दुर्भाग्य, अविश्वास, भूख, छल और मृत्यु की गरम शलाकाओं से तन-मन छनछना रहे हैं।

भूले राजा तुंगध्वज तो राह पर आ गये परन्तु सोच रहा हूं कि हम कथाश्रोता और पूजक क्या कभी सचमुच सत्यनारायण को समझेंगे? कभी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

अपनी महान् भूल के लिए पश्चाताप करेंगे ? कभी सत्यनारायण की उपेक्षा के लिए आंसू बहायेंगे ? क्या कभी यह वज्र की तरह कठोर बना हृदय पिघलेगा ? क्या कभी तना हुआ यह मिठ्टी का सिर झुकेगा ? क्या कभी अपनेपन का घमण्ड ढहेगा ? क्या सचमुच हम सत्यनारायण के पूजक हो जायेंगे ?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

कविता का विकल्प

अपनी कविता लेकर बैठा हूं। सुहावना समय है। खूब पानी पड़ा है। पसीने से लथपथ आकुलता, ऊमस की उकताहट और बदरकटू घाम की माहुर ठिठोली, सबका असर घुंआधार जलधार में एक किनारे लग गयी। सावां सिहर उठा है। को दो कुनमुनाने लगा है। भदई पर रंग चढ़ कर एक ओर पियराई झड़ गई, दूसरी ओर सांवला पानी निखर आया। अस्हराई में छिपे अमर गायकों ने रस की धारा बहा दी। कितने स्वर ताल और कितनी भीड़-मूर्छनाएं, कौन बताए ? आसमान पर बादल, जमीन पर दूर्वादल, सुन्दरता की आंखों में काजल, पुलकित सृष्टि-शरीर, खिल-खिला पड़ी सरिता भी। पावस की धूमिल छांव, धुले-धुले गांव, हरियाली के पावन-पांव, चहकते मोहक पायल, मस्तमस्ती, मन के भीतर कोई अव्यक्त बन्धान खुल रही है।

यह मेरी कविता। कविता क्या, तुकबन्दी भी ठीक-ठीक नहीं। अचानक उस दिन बादल की तरह उमड़ आयी। भावों के सोते छलछला उठे। संसार पानी-पानी हो गया। पाकड़ की छतनार गांछ पानी में नहाने लगी। अल्हड़ युवती की तरह मेघ-मल्हार की तानों पर हहर-हहरकर गाने और छपक-छपक नहाने लगी। उसकी मरकत-केशराशि से निचुड़-निचुड़-कर मोती जमीन पर बिखरने लगी। वह स्वच्छन्द क्रीड़ा। मुझे ईर्ष्या हुई। मैं क्यों नहीं इस मनोरम स्नान पर्व पर उतर पड़ता हूं ? डरता हूं कि मेरे कपड़े भीग जायेंगे। छिछिल-बिछिल पानी-कीचड़ में शरीर सन जाएगा। जुकाम आ धरेगा। कितना कहूं। इस पाकड़ की मस्ती मुझमें कहां ? इसकी-सी लहराती जवानी कहां ? कितनी प्रफुल्लित है यह ? मैंने उस दिन गाया—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ओ, धरती की बेटी, तू धरती से सीधे रस खींचती है, अपने उन्मुक्त रसोल्लास का मुझे भी भागीदार बना। अपनी सहज सरसता और मस्ती मुझे भी दे। मैं भी आसमान पर सिर उठाकर झूमूं। बूंदों की झड़ियों को कुछ न गुनूं। मेघ-परियों का स्वर्गीय सुधा-संगीत सुनूं। तू नहीं, जड़ तो मैं हूं। तेरी निसर्ग चेतना में मेरी चेतना खो जाय। तेरे नीचे झड़ती बूंदों से बनते बुल-बुलों की तरह मेरी सारी कृत्रिम सभ्यता के खोल फट जांय। तेरे सिर पर पड़ती छहर-छहर बूंदों की तरह मेरे ऊपर भी यह स्वर्ग का निर्मल जल खूब पड़े और सारे नये-पुराने संस्कार धुलकर बह जांय।

परन्तु, घोर खेद! मेरी कविता सुनने की किसी के पास फुरसत नहीं। मैं चाहता हूं कोई मेरी कविता सुनें। सुने ही क्यों? प्रशंसा भी करे। इधर दुनिया ने काम-काज का ऐसा अटल जुआ कन्धे पर बांध लिया है कि मरने की भी फुरसत नहीं। दम लेना दूभर है। हांफ-हांफकर चलते हैं। कांप-कांपकर गिरते हैं। हृदय की धरती सूखकर ऐसी कड़ी हो गयी कि सुकुमारता का अंखुआ आंख भी नहीं खोल पाता। बहार के साल खत्म। भावों की फसल का सत्यानाश हो गया। कविता की बाजार में एकदम मन्दी आ गयी। कहते हैं, आज पागल ही कविता लिखते-पढ़ते हैं। मैं पागल हो जाना चाहता हूं। चालाकों की दुनिया से मन ऊब गया। यहां बड़ी ऊमस है। दम घुट जाता है। मुझे इस समय जैसी बहार के क्षण चाहिए। मैं वहां रहना चाहता हूं जहां पक्षी चहकते हों, फूल महकते हों और···।

अब मैं विवशता की ही कहानी लिखूं। कविता किसी न किसी को सुनानी थी। दौड़ा-दौड़ा गया—जैसे दौड़ा-दौड़ा जाता है बरखा का पानी—'नदीश' जी के यहां।

'एक मिनट समय देंगे?'

'ओ, आप? बैठिए। लेक्चर्स नोट तैयार कर रहा हूं। पैंतालिस मिनट लगेंगे। तब तक आठ बज जायेंगे। फिर एक घण्टा ट्यूसन पर। आधे घण्टे में स्नान-भोजन, पांच मिनट आराम। फिर, कॉलेज। चार बजे तक घन-घोर रूप से बिज़ी।···' कहिए क्या काम है?

'एक कविता सुनाना चाहता हूं।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

'कविता ? किसकी ?'

'मैंने लिखी है।'

'आपने ? यह क्या वाहियात काम करने लगे ? खैर, जब लिखी है तो सुनूंगा ही। किसी छुट्टी के दिन आइए···पर छुट्टियां तो और व्यस्त हो जाती हैं, फिर भी आइएगा। इस समय तो देख ही रहे हैं। क्षमा कीजिएगा।'

और, सचमुच उनकी छुट्टियां और अधिक व्यस्त निकलीं। दूसरे मित्र इनसे भी बढ़-चढ़कर निकले। अब हिम्मत नहीं रह गयी। कल शाम को जगदीश बाबू मैदान के एक छोर पर, हरी-हरी घास के गलीचे पर, कुछ 'लाइट मूड' में बैठे मिले तो एक बार फिर तबीयत फुरफुरायी।

उस समय पूरे आसमान को घेरता हुआ एक बड़ा-सा इन्द्रधनुष उग आया था। ऐसा लगता था कि बादलों के भारी गट्ठर को इस सतरंगे रस्से से बांधकर इन्द्र का कोई अनुचर कहीं ले चला। अथवा देवकन्याओं को सावन में झूले की सुधि आयी और स्वर्ग से धरती के छोरों को छूती हुई यह रंग-बिरंगी दिव्य डोर लटका दी गयी। अथवा घनश्याम में घनश्याम का रूप छिप गया है। केवल विविध रंगों की रश्मियों से विभूषित होने के कारण यह विशाल वनमाला दृष्टिगोचर हो रही है। उस प्रणम्य सुर-धनु को निहारता मैं जगदीश बाबू के यहां पहुंचा।

'खूब अकेले आनन्द लूट रहे हैं जगदीश बाबू ?'

'आओ भाई कैसा आनन्द ?'

'यह पोखरी में वनमुर्गी की टटकी कूंक और अनुप्राणित झाड़ियां, गौरया की चहक का चटकीला स्वर और पंडुक-दम्पत्ति की यह अविरल मधुर फूक ! आनन्द और दूसरा क्या होगा ?'

'कहां तो ठीक परन्तु सुन कहां पाता हूं। कान बहरे हो गए। दिल फट गया। एक बात बतायें, दिनभर से परेशान हूं, आपने देखा है ? आज चकबन्दी के सी० ओ० साहब आने वाले हैं···यह दुनिया अब जीने लायक नहीं रही।···हाथ में कागज कैसा लिए हैं ?'

'एक कविता लिखी है। सुनाऊं ?'

'कविता लिखे हैं ? आप ? खैर, एक जमाना था कि मैं भी कविता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

लिखा करता था। अब तो ज़िन्दगी ऊसर हो गयी। फटे को गांथते ही बीतता है।···मेरे परिवार का कलह-कांड आपने सुना ही होगा। मेरे पिता तीन भाई थे। ग्यानचन्द, ध्यानचन्द और मूलचन्द। ग्यानचन्द के हम दो भाई। ध्यानचन्द छोटी उम्र में ही लापता हो गए परन्तु खाते में अभी नाम उसी प्रकार चलता आया···।'

यह थी वास्तव में एक लम्बी दास्तान जो दिन खतम हो जाने पर भी नहीं खतम हुई और ऊबकर मैं उठ आया। अब निश्चित कर लिया किसी को सुनाने नहीं जाऊंगा। हां, सुनने वाला जब स्वयं आ गया तो बात दूसरी थी। ये थे डॉक्टर प्रसन्न राय। रात में खा-पीकर हम निश्चिन्त हुए तो यह तय रहा कि पहले काम की बात फिर कविता-पाठ। काम की बात उन्होंने शुरू की––

'हां, तो तीस-चालीस आदमी स्वाभाविक रूप से कामकर्त्ता किसानों की भांति सड़क के आस-पास मंडराते रहे। कुछ गाय चराते रहे। कुछ खेत अगोरते रहे। सुरती मलते रहे। पुन: अपने लोगों में से साफ-साफ पोशाक वाले लोग रहें। ये लोग मंत्री जी की मोटर रोककर कांग्रेस टिकट के लिए बलभद्रजी की सिफारिश करें। इतने में कुतूहलवश सब लोग जुट जायेंगे और पूछेंगे कि क्या बात है ? टिकट की बात सुनकर सब लोग एक स्वर से बलभद्र का विरोध करेंगे और धीरेन्द्र कुमार के गीत गाए जायेंगे। इस प्रकार धीरेन्द्रकुमार की जबरदस्त कनवेंशिंग की जाएगी। सारा प्रबन्ध तुम्हारे जिम्मे, एकदम फर्स्टक्लास का, अचूक और सटीक। सारे नाटक का रिहर्सल कल दिन में हो जाय। याद रखना, सायंकाल लगभग पांच बजे।···अब कविता सुना सकते हो।'

वे जल पीकर आराम से लेट रहे। एक बीड़ी सुलगाई। समय अनमोल था। गाने तो नहीं आता, पर लय बांध ली। एक मिनट में कविता की धारा प्रवाहित होने लगी। प्रभावशाली बनाने के लिए कई-कई बार दुहराया। एक बार डॉक्टर साहब ने वाह-वाह भी की। एक छन्द सुनाकर उसका प्रभाव जानने के लिए उधर दृष्टि घुमाई तो ज्ञात हुआ कि डॉक्टर साहब की नाक बज रही है।

'क्या सो गए ? सुनिए भी !' मैंने कहा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

'थक गया हूं भाई, रहने दो। कल सुबह सुन लूंगा।' डॉक्टर ने करवट बदल ली।

अब, आज की यह सुहावनी वेला देखकर फिर कविता का जोश उमड़ रहा है तो मन में आता है कि अपने सिर पर स्वयं तमाचा जड़ लूं। दुनियां में कविता कौन सुनता है ? यदि सुनाये बिना जी की प्यास नहीं बुझती है तो क्यों न इस कुर्सी को सुनाएं ? क्यों न टेबुल को सुनाएं ? यह पाकड़ का वृक्ष ही क्यों अपात्र है ? हरियाली के बीच सिर उठाए तना हुआ वह सरेहि का एकक्षत्र राजा, वह ताड़ का पेड़ क्यों न मित्र हो। उस पर बैठे जीवों को सुनाऊं तो क्या बुरा ? कौन उन्हें गिद्ध कहता है ? ये सिद्ध है। धरती से दूर ऊंचाई पर रहते हैं। गगन-बिहारी हैं। कितने शिष्ट हैं ? डैनों के काले कोट में निरुद्वेग मौन बैठे हैं। दिव्य दृष्टि तो इनकी प्रसिद्ध ही है। मुझे याद नहीं, कब इन्हें नहीं देखा है। जब आंख उठाता हूं, उस एकान्त के उर्ध्वसिद्ध पीठ पर बैठे मिलते हैं। आंधी, वर्षा, शीत, धूप सब दिन एक समान, पूरे योगी, पूरे साधक, किसी कल्पना में, किसी ध्यान में तब ?

हे खगराज ! सुनो अब तुम्हीं मेरी कविता। यह पावस की मोहक शोभा का अनमोल दर्शन, ये सारे स्वर-ताल और इस क्षण की सारी सुकुमार कल्पना तुम्हें समर्पित है।···

परन्तु, हैं ? क्या कहते हो ! तुम्हें कविता नहीं कच्चा मांस प्रिय है ?

ओफ ! तुमने मेरी सारी अभिलाषा पर पानी फेर दिया। 'ऊंचे निवास' का यह महान् धोखा !

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

उड़ता पंछी

सवेरा हो गया। प्रभात की आभा हंस पड़ी। अंधेरा धुलने लगा। मेरे देखते-देखते ही काजल की कोठरी-सी दुनिया स्फटिक-सी चमकने लगी। रंग-विरंगे चित्र उस पर उभरने लगे, आंखों में भरने लगे। प्राण पर उतरने लगे। पहचान सजग होकर देखने लगी। कुछ कल्पना-सा कुछ गुमसुम मोहन रूप और जगते में कुछ सपने-सा मालूम हुआ। यह सवेरे की हल्की शीतल उंगलिया छू रही हैं। विना सूरज का पवित्र यह प्रकाश मानो विना धरती की आकाशगंगा का पानी है। आंखें तैर रही हैं। मन नहा रहा है। कुविचार डूब गए। जब मन्द-मन्द वायु चलती है तो हृदय में हिलोरे उठने लगती हैं। मैं ही नहीं आनन्दित हूं। यह समय का सतयुग किसे नहीं विभोर किए है? कौन नहीं मग्न है? कौन नहीं चहक रहा है? किसके भीतर की सुगन्ध-धारा नहीं फूट निकली है? इस समय हर गति में नृत्य है। हर शब्द में लय है। यह दुर्लभ क्षण? कौन कहता है कि अब अमृत का सोता सूख गया है? कौन कहता है कि संसार से मधुरता विदा हो गयी? कौन कहता है कि बिना दु:खवाला सुख, बिना कांटेवाला फूल और बिना विषाद वाला हर्ष इस दुनिया में नहीं है? है, अवश्य है। मैं इस समय उसे ही देख रहा हूं। मैं जीवन-मुक्त की तरह हो गया हूं। मेरे सामने इस समय सब स्वर्गीय सामान हैं। दुनिया की बातें बहुत दूर पड़ गयी हैं।

मेरे सामने एक पेड़ है। उसकी फुनगी पर सोया कलरव जाग पड़ा है। पक्षी घोंसले से निकलकर डाल पर आ गया है। 'जिस प्रकार मेरे सामने हंसता हुआ संसार है उसी प्रकार उनके सामने भी अंगड़ाई लेती दुनिया है। नरपक्षी ने पंख फड़फड़ाए और चोंच से उसे सहलाया। उचक-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

उचककर झुक रहा है। ऐसा लगता है कि प्रकाश को प्रणाम कर रहा है। शायद इसका मन भी पूरबी क्षितिज की भांति रंग गया है। उसने पीछे मुड़-मुड़कर देखा है। उसकी संगिनी अभी घोंसले में है। घोंसले के द्वार पर उसकी आंखें चमक रही हैं। पक्षी अब अपनी चोंच दायें-बायें से नीचे की डाल पर रगड़ रहा है। यह युग-युग की भूख का इशारा है क्या? लगता तो है! और उसने कण्ठ खोलकर दो-तीन आवाज जो लगायी तो मालूम हुआ कि जैसे मधु का सोता फूट पड़ा। एकान्त गमक उठा। घोंसले के दरवाजे पर से विहंगी ने भी उसकी बोल को दुहराया और इन दोनों जीवों ने मिलकर अपने स्वर्गीय संगीत से इन क्षणों को अमर कर दिया। फिर क्या था? एक मामूली प्रयत्न में उस डाल पर दोनों पास-पास हो गए। एक अगर सुख है तो दूसरी शान्ति। एक अगर रस है तो दूसरी रीति है। एक अगर प्रेम है तो दूसरी पूजा है। जीवन की डाल पर दो पवित्र फूल! दो लुभावने जीव!!

• विहंग ने एक बार फिर पांखें फड़फड़ायीं। फिर पीछे मुड़कर देखा। वह इस प्रकार जैसे आंखों-आंखों में कुशल समाचार पूछ रहा है। अब विहंगी उसके अधिक निकट आ गयी। उसकी इस क्रिया ने मानो मौन रूप में यह उत्तर दिया है कि इस तरह साथ-साथ रहने में कुशल ही कुशल है।

• दूर से सर्...सर्...हर्...हर्...की ध्वनि आ रही है। मानो आसमान का दृश्य लहरा रहा है। आंखों से देख तो नहीं रहा हूं, परन्तु ऐसा लगा जैसे मेरे सिर पर से पक्षियों का एक झुण्ड सर्राटे भरता निकल गया है। सवेरे-सवेरे ही यह यात्रा? क्यों नहीं? सूरज निकला। यज्ञ शुरू हो गया। कर्म का हवन होने लगा। शब्दों का मंत्र गूंज उठा। भीतर की और बाहर की आग जल उठी। कमल-कोष खुला तो भौरों की भूख को भला कौन रोक सकता है! तो भूख है यह! मैंने जाना और ऐसा लगा कि पक्षी कुछ चंचल हो उठा। उसकी चंचलता साफ है। डाल पर इधर-उधर करता है। आगे-पीछे हटता है। दायें-बायें सरकता है। सिर ऊपर-नीचे करता है। चोंच पुनः-पुनः डाल से रगड़ता है। जीवन के लड़ाई की तैयारी है। शायद हथियार पैनाता है। कभी उचकता है। लगता है कि अब हवा में उठ जाएगा। कभी एकदम शान्त हो जाता है। मालूम होता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

है कि समाधि लगा ली है। जब-तब रह-रहकर बोल भी रहा है। इसकी बोली बिगुल का काम कर रही है। यह अपने को जगा रहा है, दुनिया को जगा रहा है और हमें जगा रहा है, परन्तु मैं तो जगा हुआ हूं। कितना उपकार है इसका ?

विहंगी भी उसकी देखा-देखी कण्ठ खोल-खोलकर मिठास बिखेर रही है। पर लगता है जैसे विहंग उसकी परवाह नहीं कर रहा है। वह कटा-कटा-सा दूर है। यह पास सटती है तो वह अलग हट जाता है। शायद विहंग का मन किसी दूर देश के दाने पर मंडरा रहा है। किसी और विशाल आकाश में गोते लगा रहा है। शरीर भर उसका यहां है।···और यह भी कहां ?

एक पल भी नहीं लगा कि वह पक्षी आसमान में हिलती-डुलती पांख हो गया। वह अकेला है तब भी वेग से गतिमान है। वह पिछड़ गया है तब भी निराश नहीं है। शून्य की प्रकाश-धारा को पांखों से चीरता, वह तीर की तरह चला जा रहा है। अब मेरी आंखें जवाब दे रही हैं। अब मैं उसे नहीं देख पा रहा हूं। अब वह हमारी आंखों की पहुंच के बाहर चला गया है। मैं अपने को फिर पेड़ की उस डाल पर लौटाए ला रहा हूं, परन्तु यहां यह क्या ? विहंगी नहीं है। डाल सूनी है। फूल उड़ गए। आसमान में खिल गए। विशाल में मिल गए। मैं सोच रहा हूं, इस विहंगी ने कौन-सा रास्ता लिया ? क्या इसकी राह दूसरी है ? क्या इसका पथ भिन्न है ? हो सकता है। मगर मंजिल तो एक ही है।

नीचे धरती पर पशु विचरण करते हैं। मनुष्य काम करते हैं। सभ्यता आगे बढ़ती है। इतिहास बनता है और बिगड़ता है। भूगोल नये-नये रंग बदलता है और ऊपर आसमानी जीवन कितना एक रस है। एक रूप है। एक रंग है।

जहां हमारी ये मामूली आंखें काम नहीं करती हैं वहां भी कल्पना की आंखें घुस जाती हैं। अद्भुत प्रबन्ध है। मैं अब उस पक्षी को बाहर की आंखों से न देखकर भीतर की आंखों मे देख रहा हूं। वह मुक्त आकाश में उड़ रहा है। उड़ता चला जा रहा है। बिना बाधा के उड़ता है। बिना थकान के उड़ रहा है। एकदम सीधे उड़ रहा है। अमन्द उड़ रहा है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

एक धुन-सी प्रतीत हो रही है। अरे, वह कैसा है लक्ष्य जो खींचकर जल्दी से पास नहीं आ जाता है। वह कैसी है मंजिल जो नाचीज चिड़िये की पांखों को पसारती चली जा रही है।

पक्षी के रोज-रोज के संगी-साथी भी हैं। कुछ आगे निकल गए। कुछ पीछे आ रहे हैं। इन सब बातों से उसे कुछ भी मतलब नहीं। वह तो बस उड़ता चला जा रहा है। ऊपर वह लकीर-सा खींचता चला जा रहा है। नीचे धरती की सारी सुन्दरता वैसे ही छूटती चली जा रही है। ये हरियाली से भरे खेत हैं। ये जल से भरी नदियां हैं। ये सभ्यता से भरे नगर हैं। ये गरीबी में हंसते गांव हैं। चहक भरे बाग हैं। ये महक भरी वाटिकाएं हैं। सब उसे बुलाते हैं। पर उसे तो मानो इन सब का ध्यान ही नहीं। उसने तो जैसे उड़ने की ही ठान ली है। कहां उसे जाना है कौन जाने? विशाल आसमान को वह दो भागों में बांट रहा है। प्रकाश उसका पीछा कर रहा है। किरणों के समुद्र में बस मनमोहिनी डोंगी-सा डोल रहा है। ऐसा लगता है जैसे वे स्वर्ग का वायुयान है और धरती पर प्रातःकाल को उतार कर पुनः तेजी से चला जा रहा है। काश! कि हमारा मन इसी प्रकार उड़ता! हां, यह उड़ता है जरूर! मगर कहां? यह तो उड़ता नहीं बल्कि मंडराता है! रूप पर, कभी रुपया पर! कामिनी पर, कभी कंचन पर!! चमड़ी पर कभी दमड़ी पर!!! इस तरह उसकी ऊंची गति कहां? इस तरह उसकी एक दिशा कहां? अरे, वह तो जैसे एकदम धरती का हो गया है। तब यों कहूं कि वह मंडराता भी कहां है? वह तो जैसे रेंगता है! कीड़ों-सा…।

और मेरी आंखें—भीतर की आंखें—प्रमाण हैं कि उस जीवन को यों ही उड़ते-उड़ते बीता। अवधि का एक लम्बा भाग यों ही समाप्त हुआ। इच्छाओं का वह सुनहरा लोक कहां है? अभिलाषाओं का वह नन्दन-वन कहां है? मन को रमाने वाला वह स्वर्ग कहां है? ओ अनन्त के यात्री! यह तुम्हारा कैसा जीवन है? जिसको दुनिया के लोग अपनी भाषा में विराम कहते हैं, सुख कहते हैं, शान्ति कहते हैं, थिरता कहते हैं, ये सब कहां है? मैं तुम्हारे मन की तसवीर लेना चाहता हूं। तुम क्या हो जो कि कहीं रमते नहीं!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

अब मैं क्या बताऊं कि पक्षी कहां आ गया है ? इसने तो ऐसा किया कि अपनी छाया से सारी सृष्टि नाप डाली। इस पक्षी की बातें सोच-सोचकर ईर्ष्या-सी हो रही है। मैं सोचता हूं कि क्या मैंने भी इसी तरह अनन्त यात्राएं नहीं की हैं ? क्या इसी तरह मैं भी शून्य में बेतहाशा भागता नहीं चला जा रहा हूं ? क्या मुझे पता है कि मैं कहां जा रहा हूं ? मैं कहां से चला, इसका क्या कोई चिह्न है ? मैं कभी थका, या कभी रुका क्या इसका कोई प्रमाण है ? मुझको संसार के किसी रूप ने भरमाया, क्या यह सच है ? बिलकुल नहीं ! मैं कौन हूं जी ? क्या यह जो यहां बैठकर लिख रहा हूं ? एकदम नहीं ! मैं वह हूं जो शून्य में किसी ओर जा रहा हूं। धरती से बहुत ऊपर ! बहुत ऊंचा ! दिव्य गति है। दिव्य लक्ष्य है। तब यह सब क्या है ? कोरा भ्रम है ? और क्या ? खूब जी भर इस झूठे जीवन पर हंसना है। कहां मैं अनन्त गतिशील और कहां मजबूरियों की हथकड़ियां—बेड़ियों में जकड़ा यह जड़ जीवन ! कहां मैं शून्य-विहारी और कहां ये नरक के अनुभव ! यह सभ्यता, यह दौड़ धूप, यह कोलाहल, यह चहल-पहल, सब बेकार। सब झूठ। बस खूब हंसने की चीज़। और यह सब वास्तव में मैं नहीं हूं। मैं कुछ दूसरा हूं। मैं इनसे एकदम भिन्न हूं। मेरे जोड़ की, मेरी उपमा की अगर कोई चीज़ है तो वह पक्षी। वह पक्षी जो चला तो बस चलता ही गया, उड़ा तो उड़ता ही गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

आठ जुलाई

आज शाम की एक छोटी-सी घटना ने आठ जुलाई की मनोरम कल्पना को धूल में मिला दिया। सोच रहा था कि कल गर्मी की लम्बी छुट्टी के बाद स्कूल खुलेगा। कितनी आह्लादकारिणी उत्सुकता एवं मोहक सम्मिलन का दिन होगा। दिशा-दिशा से चहकते फूल, विहंसते चेहरे, कुछ नए कुछ पुराने आ-आकर विद्यालय के बाहर, भीतर, मैदान में, चबूतरे पर, सीढ़ियों पर और कुएं पर फैल जायेंगे। अवकाश का सन्नाटा अचानक मीठे कोलाहल से भर जायेगा। मित्रों से महीनों बाद मिलने में हर्ष भरी मुसकान होठों पर से जैसे बिछल-बिछल पड़ेगी। साथ बैठकर विविध चर्चाएं होंगी। नया रंग होगा नया ढंग होगा। जैसे सुखदायक सपने से जगकर उसे स्मरण कहते हैं और लोगों से कहते फिरते हैं। आगत की नवीनता में बीते वर्ष की सारी व्यथा खो जायेगी। हमारे भोले-भाले बालक सामने होंगे, श्रद्धावनत होंगे जिनका हमें निर्माण करना है। कितने प्यारे ! कितने पवित्र ! कितने निर्मल ! स्वर्गीय मुसकान से भरे ! देवताओं के से विविध रूप। अजी, इन्हें पढ़ना क्या है, ईश्वर की पूजा है···।

इस प्रकार के विह्वल चिन्तन ने इस प्रकार भुला लिया था कि पता नहीं चला कि टहलते-टहलते दूर नाले के पास आ गया। आसाढ़ की सुहावनी संध्या वन-तुलसी की गंध बिखेरती क्षणभर के लिए रुककर विहंस गयी थी। तट पर की झाड़ियों में से सुनहला पानी उतर गया था और वे स्तब्ध भाव से किसी की मानो प्रतीक्षा कर रही थी। जल-हीन गहरे नाले में सबसे पहले गोधूलि वेला उतरी और शनैः-शनैः समस्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

जनहीन एकांत प्रांत धुंधलके में डूब गया।

वापस लौट चलने के लिए मुड़ा कि उसी समय दक्षिण ओर नाले के तट पर नीचे से एक सिर उठता हुआ प्रतीत हुआ। गरदन तक दिखाई पड़ने के उपरान्त वह सिर पुनः लोप हो गया। मैं भारी चक्कर में पड़ गया। आखिर वह कौन है? देर तक मैं टकटकी बांध कर उसी ओर देखता रहा। लगभग पन्द्रह बीस मिनट के बाद एक आदमी तट पर आकर खड़ा हो गया। तब तक नीचे से एक आदमी और निकला। दोनों रास्ते की ओर बढ़े। मुझे यह देखकर भारी हैरानी हुई कि दक्षिण ओर दूर से एक व्यक्ति और नाले का तट पकड़े चला आ रहा है। स्पष्ट था कि उधर से कोई रस्ता कहीं जाने का नहीं था। सूखा के कारण नाले में पानी भी नहीं कि शौच-क्रिया के लिए किसी के जाने की संभावना थी। मैं तट पकड़कर आने वाले अकेले व्यक्ति की ओर देख रहा था कि बीच में कब इधर वाले दो से चार हो गए, यह पता नहीं चला। कुछ दूर आकर ये चारों रुक गये और तब तक रुके रहे जब तक वह दूर वाला अकेला व्यक्ति नहीं आ गया। अब ये पांचों आगे बढ़े। अब मेरे इनके बीच लगभग डेढ़ सौ गज का फासला रह गया जो शनैः-शनैः कम होता जा रहा था।

एक तो गांव से दूर निर्जन स्थान, दूसरे अंधेरा चढ़ चला था और तीसरे संदिग्ध गति वाली पांच भूत-सी शक्लें बढ़ती पास चली आयीं। एक भय की हलकी सिहरन हृदय में उठी। पुनः ध्यान में आते ही कुछ आश्वस्त हुआ कि पास में साधारण कपड़े लत्ते के अतिरिक्त है क्या जिसके लिए चिन्तित होऊं?

वे आ गए और दक्षिण दिशा छोड़कर मेरे तीनों ओर खड़े हो गए वे भी चुप, मैं भी चुप। मैं अपने को प्रसन्न बनाने की चेष्टा करने लगा और जब तक आंखों ने एक बार सरसरी तौर पर सबको देखने का कार्य पूर्ण किया तब तक होठों पर मुस्कराहट भी आ गयी। ठीक उसी समय पश्चिम ओर खड़ा कम उम्र का युवक पूरब ओर संकेत कर बोल उठा—'अरे वह देखो, पेड़ टूट कर गिर गया।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

मैं स्थिर रहा बल्कि बोलनेवाले युवक के चेहरे पर आंखें गड़ा दी। उसकी आवाज और चेहरा मुझे कुछ परिचित-सा लगा। ऐसा लगा कि इसे मैंने कहीं देखा है या यह मेरा निकट का आदमी है। मन अतीत के ताने-बाने में उलझ गया और उसी समय उत्तर वालों में से एक ने जिसे मैं कुछ पहचानता था। वह देहात का बदनाम डकैत था, बड़ी रोबीली आवाज में बीड़ी की मांग की। मैंने उसकी ओर ध्यान न देकर उस युवक को सम्बोधित कर कहा—'तुम्हें तो मैंने कहीं देखा है जी।' संभवतः इतनी देर में उसने भी मुझे पहचान लिया था और कुछ शरमाई-सी आवाज में कहा, 'जी, मास्टर साहब मैं आपको भी पहचान रहा हूं, प्रणाम !'

'खुश रहो, कहां जाओगे ? मैंने पूछा।

'इधर ही'''।' उसने उत्तर दिया कि बगल वाला उसका हाथ पकड़ कर चल पड़ा। दो एक बात और पूछना चाहता था। वे चट आगे बढ़ गए और बहुत जल्दी अंधेरे में खो गए तब मैं भी नाना प्रकार के विचारों में विमूढ़ मन्थर गति से लौट पड़ा।

बहुत जोर देकर भी सोच नहीं पाता हूं कि उसका नाम-ग्राम क्या है ? इतना अवश्य पकड़ में आया है कि वह मेरे यहां पढ़ने के लिए आया था। सबसे पीछे सीट पर चुपचाप बैठता था। निश्चय ही बिछड़ी कही जानेवाली जातियों में से वह था और जहां तक याद आया वह बहुत अनुपस्थित रहा करता था। प्रत्येक विषय में बराबर फेल होता और अन्त में कब विद्यालय से नाता तोड़ लिया यह पता नहीं चला और आज उसे इस रूप में देखा। ओफ्: ये चेहरे। रात के अंधेरे में, सोते से अचकचा कर जागने पर कितने भंयकर हो जाते हैं। चोर ? कितने डरावने शब्द हैं। मगर आदमी तो वहीं हैं, उसी प्रकार के हैं जैसे हम-आप हैं। कोई फरक नहीं। तब फरक है क्या ? जरूर कुछ अन्तर है। एक अन्तर तो गरीबी-अमरी का है और शायद यही अव्वल अन्तर है। अगर सब लोग बराबर दर्जे के हों, कोई भूख से मरता न हो और कोई सर्वस्व वंचित नहीं हो तो इस दानवता को कहां जगह मिल सकती है। क्या दुनिया इस प्रकार की नहीं बनायी जा सकती है, जिसमें चोर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

डाकू न रहें ? वह दौलत किस काम की जिसके होते मारे विविध भय के चैन नहीं और जिसके लिए वंचित लोगों को चोर डाकू बनना पड़े। दुनिया जरूर इस प्रकार की बनायी जा सकती है परन्तु खेद है कि अब तक ऐसी दुनिया बनाने का प्रयत्न नहीं हुआ। अब तक तो केवल कोरी शिक्षाएं दी गयीं हैं। लम्बे-लम्बे प्रवचन छापे गए हैं। और गद्दीनशीनों की ओर से वाग्जाल फैलाया गया है। आज के युग को गर्व है कि विद्या-वृद्धि में उसने अभूतपूर्व चरम विकास को प्राप्त किया है। मैं पूछता हूं कि उसने दुनिया को बदलने के लिए क्या किया है ? कितना किया है ? क्या उसने ऐसी शिक्षा की व्यवस्था की है जो पुरानी सड़ी गली दुनिया में आमूल रद्दोबदल कर दे और कहीं विषमता का नाम न रह जाए तथा समाज में कोई चोर न हो, कोई डाकू न हो ?

आज मैं जिससे भयभीत था, वह कल का मेरा क्षात्र था। उसे बनाने का उत्तरदायित्व मेरे ऊपर था। उसे योग्य नागरिक बनाने के लिए मेरे पास उसके अभिभावकों ने भेजा, परन्तु मैंने उसे क्या बनाया ? बना सकता भी कैसे था ? क्या पढ़ाई-लिखाई को ग्रहण करने और शरीर में पचाने योग्य उसका वातावरण, समाज और परिवार है ? सर्वस्व वंचित बनाकर समाप्त के एक किनारे पर बुहार कर फेंक दिए लोगों के लड़कों को पढ़ाने-लिखाने का शोरगुल तो आज बहुत है, परन्तु वास्तव में क्या वे शिक्षा पाते हैं ? और मैं देखता हूं कि जो लोग शिक्षा पाते हैं ? कल जो जाकर विद्यालय खोल कर और टेबुल कुर्सी लगा कर विद्यादान करने बैठूंगा। उस विद्या की कीमत आज क्या है ? वह विद्या जो घूसखोर हाकिम बनाती है, वह शिक्षा जो रोजगारी, जन-सेवक और स्वार्थी नेता पैदा करती है, किस काम की है ? जिन विद्यामंदिरों से आज कामचोर, बेकारों की फौज निकल रही है, रक्तपिपासु उद्योग के व्यवसायी निर्मित हो रहे हैं एवं दौलत, जीविका और कामदाम के च्युत चरित्र गुलामों की संख्या में वृद्धि होती चली जा रही है तथा समाज के सफेद पोश चोर-डाकू गढ़े जा रहे हैं, उससे क्या आशा की जाय ?

तो, कल आठ जुलाई है। स्कूल खुलेगा। घिसा-घिसाया टाइम टेबुल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

इतिहास, भूगोल, भाषा, अंग्रेजी और गणित आदि के सड़े ढर्रे, पढ़ाई-लिखाई के नाटक, फेल-पास की खाइयां फिर वेकारी या नौकरी का चक्कर या पता नहीं क्या-क्या !

अरे क्या यही आठ जुलाई है, जिसके प्रति मेरा इतना खिंचाव था ?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-Mo

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-Mo

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

डायरी

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection.